चन्दामामा
जनवरी १९९२
2 RS.

NOW with the added fun of SPUTNIK Junior!
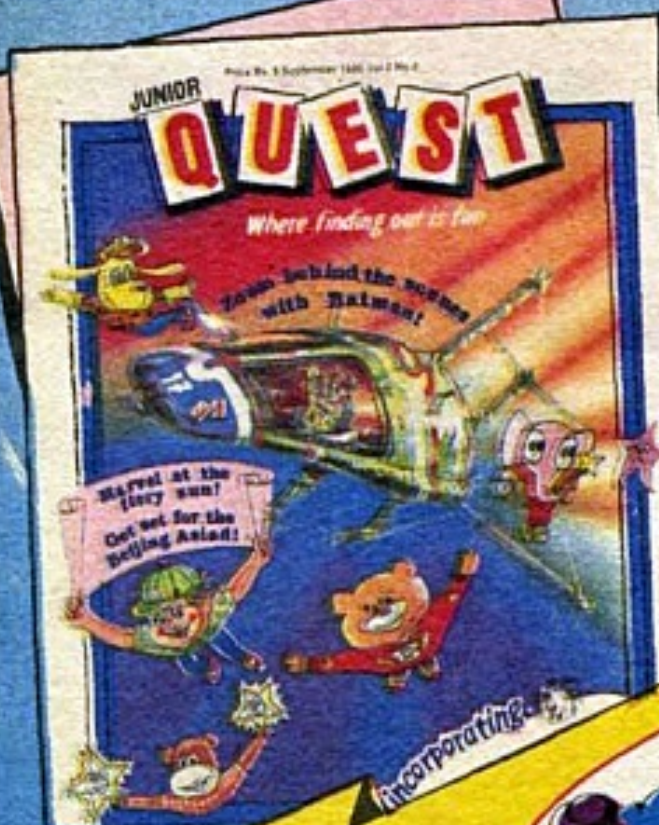
Selections from Sputnik Junior!.

* Colourfully illustrated stories and cartoons.
* Superb science fiction
* Entertainment and general knowledge

64 packed pages!
At just Rs. 6/-

To subscribe write to,
JUNIOR QUEST,
Dolton Agencies,
Chandamama Buildings,
N.S.K. Salai, Vadapalani,
Madras: 600 026.

A Chandamama
Vijaya Combines
publication

राज कॉमिक्स में पढ़िये नागराज का नया
धमाका
इस कॉमिक्स के साथ नागराज का आई मास्क मुफ्त
मूल्य सात रुपये
10 दिसम्बर को प्रकाशित हो रहा है
PRATAP MULLICK
नागराज और काबूकी का खजाना
प्रकाशक : राजा पाकेट बुक्स, 330/1, बुराड़ी, दिल्ली-110009

Don't you owe the
See my tail
It's out of a
Fairy Tale
Nice 'n' funny
I'm a Bunny
Foxy is my name
But I'm oh-so tame
Your Bear Hugs
are warmer
than mine

little one a cuddles?
I can't chas
no mice
But I'm
soft 'n' nice
Give the
Li'l Panda
a Handa
No carrots to eat
But I'm a treat
bug me tight
I'll give you
ride
CUDDLES
CHANDAMAMA TOYTRONIX
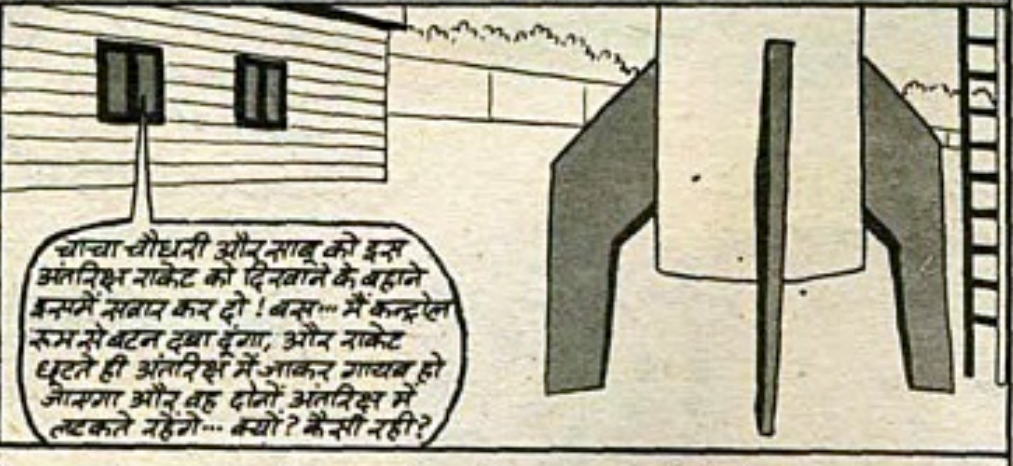
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

नयी विश्व व्यवस्था

एक और नया वर्ष । नयी विश्व व्यवस्था की संभावनाओं पर विचार करने के लिए उपयुक्त समय ।

सबसे पहले खाड़ी युद्ध की सफलता के बाद अमरीका के राष्ट्रपति जार्ज बुश ने इसका ज़िक्र किया था । उन्होंने इसकी रूपरेखा स्पष्ट तो नहीं की, लेकिन हम मोटे तौर पर अंदाज़ा लगा सकते हैं कि वह विश्व की राजनीतिक संरचना में कुछ बड़े परिवर्त्तन चाहते थे ।

पिछले एक वर्ष में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिलते हैं-सोवियत रूस और युगोस्लाविया जैसे चट्टानी परिसंघों का टूट जाना; छोटे-छोटे राष्ट्रों का उदय जिनकी एकमात्र आकांक्षा स्वाधीनता तथा प्रभुसत्ता प्राप्त करना है; महाशक्तियों का अपने शस्त्र-अस्त्र बल में कटौती करने के बारे में निर्णय ताकि विश्वशांति के अवसर बढ़ें; दक्षिण-पूर्वी एशिया तथा पश्चिमी एशिया के द्वंद्व-ग्रस्त इलाकों में शांति लौटने की संभावना । इन तमाम परिवर्त्तनों से नयी विश्व-व्यवस्था की उम्मीद बंधती है । चीन के प्रधान मंत्री, ले पेंग, कहते हैं : नयी व्यवस्था का आधार शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व (पंडित नेहरू, राष्ट्रपति नासर और मार्शल टीटो द्वारा गुटनिरपेक्ष आंदोलन की नींव रखते समय "पंचशील" के रूप में उच्चरित) होना चाहिए ।

बात का दारोमदार अब भूतपूर्व भारतीय राजनयिक डा. इंदु प्रकाश सिंह पर जा टिका है । नयी सामाजिक व्यवस्था की स्पष्ट परिभाषा अब वही उपलब्ध करायेंगे । वह इसे सहकारी राष्ट्रमंडल कहते हैं । इसमें अब्राहम लिंकन की राजनीति, लेनिन का अर्थशास्त्र और महात्मा गांधी का नैतिक दर्शन शामिल होगा । इसी में मानव जाति का निस्तार है । इस पर जमकर विचार होना चाहिए ।

इसके साथ ही 'चंदामामा' के पाठकों को नये वर्ष की शुभ कामनाएं ।

वर्ष : ४४ जनवरी १९९२ अंक : ५

एक प्रति : रु. ४/- वार्षिक चन्दा : रु. ४८/-

साहस के लिए शांति पुरस्कार
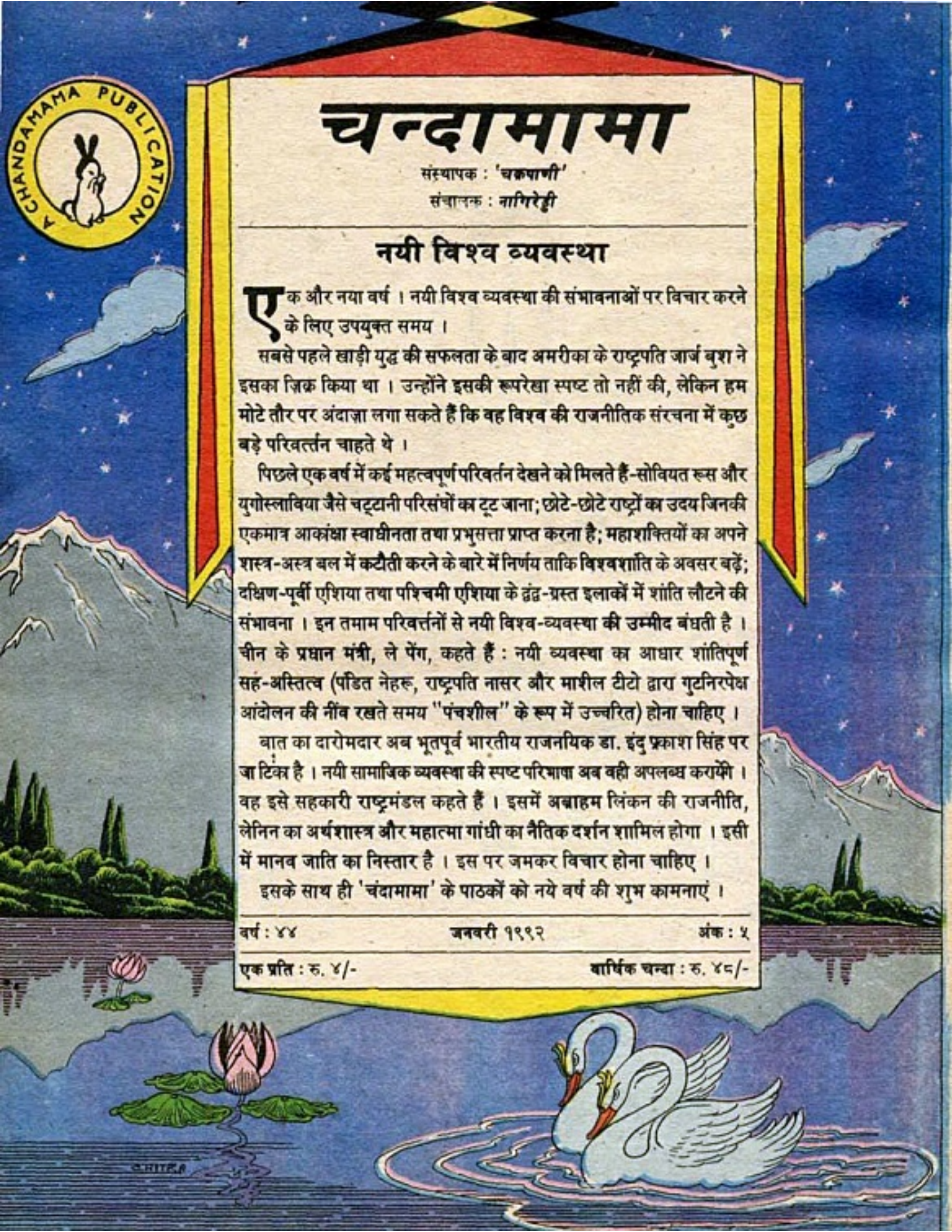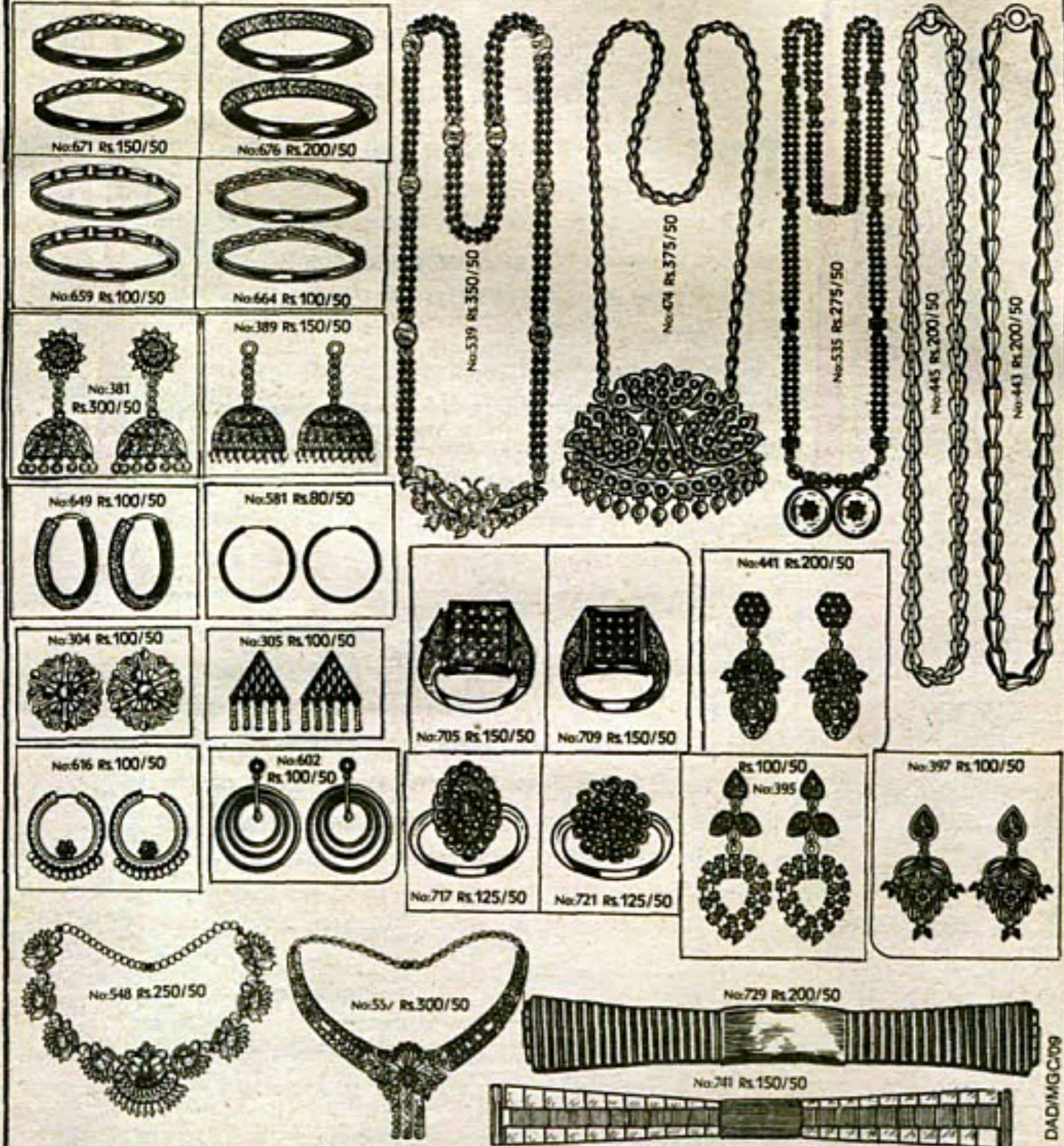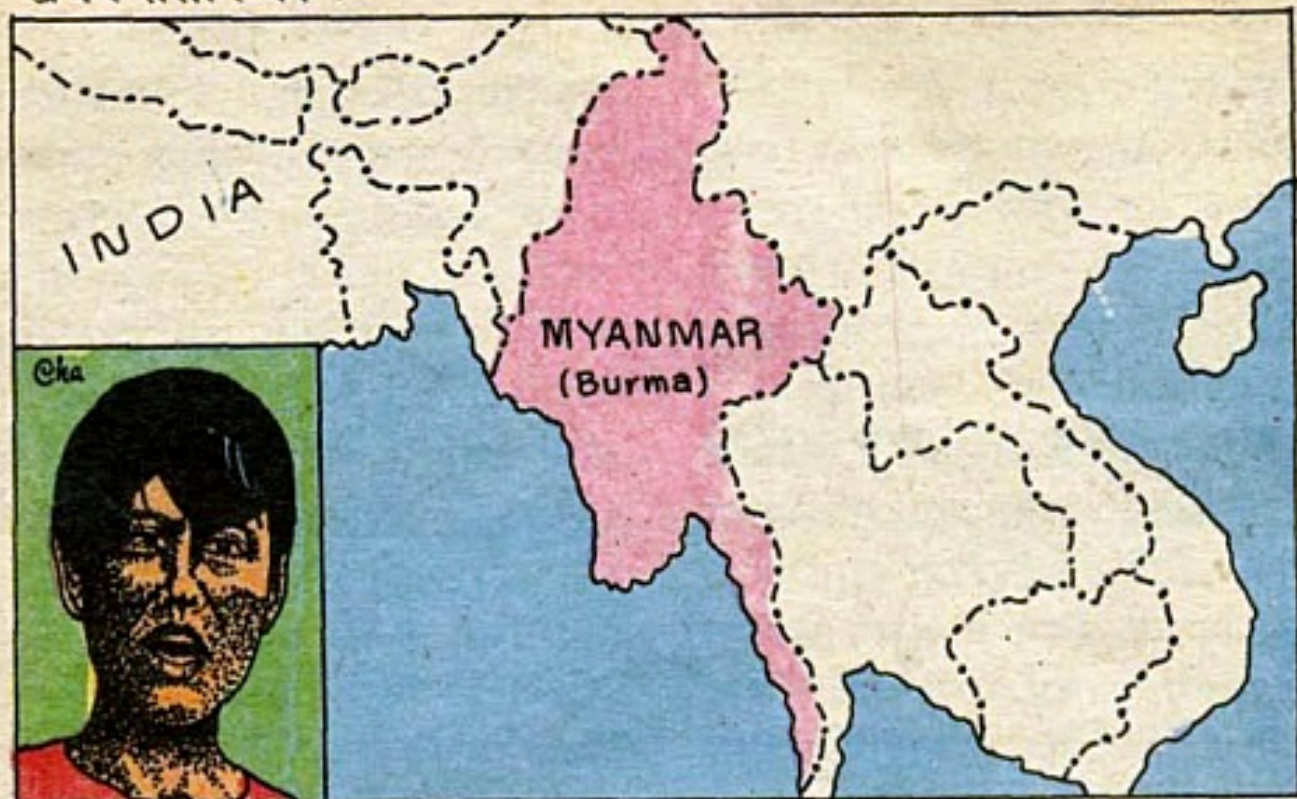
इस वर्ष का नोबेल शांति पुरस्कार म्यांमार (भूतपूर्व बर्मा) की श्रीमती आंग सॉन सू ची को मिला है। भारत के लिए यह विशेष महत्व रखता है, क्योंकि श्रीमती ची ने दिल्ली में ही अपनी शिक्षा ग्रहण की। वह यहां पहले स्कूल में पढ़ती रहीं और बाद में कालेज में। उस समय उनकी मां, श्रीमती खिन ची, भारत में बर्मा की राजदूत थीं।

प्रशस्ति-पत्र के अनुसार नोबेल समिति ने चाहा था कि इस ४६-वर्षीय, दो बच्चों की मां को "अपने अनवरत प्रयासों और विश्व में चारों तरफ उन लोगों को सहयोग देने के लिए जो शांतिपूर्ण ढंग से लोकतंत्र, मानव अधिकार और जातीय सद्भाव प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं," सम्मानित किया जाये। समिति ने उनके संघर्ष को "हाल के दशकों में एशिया में नागरिक साहस प्रदर्शन का एक अद्भुत उदाहरण" बताया।

श्रीमती सू ची आंग सॉन की सुपुत्री हैं। आंग सॉन को आम तौर पर आधुनिक बर्मा का संस्थापक माना जाता है। बर्मा किसी समय ब्रिटिश शासन के अधीन भारतीय साम्राज्य का अंग था। आंग सॉन ने ही उस समय स्वाधीनता का संग्राम छेड़ा था। उन्हें तब बर्मा का जननायक माना जाता था। १९ जुलाई, १९४७ को आंग सॉन की अपने निकट के आठ साथियों के साथ हत्या कर दी गयी। स्वाधीन बर्मा के लिए यह एक दुःखद घटना थी। उस समय सू ची

मुश्किल से दो वर्ष की थीं ।

दिल्ली में अपनी कालेज की शिक्षा समाप्त कर चुकने के बाद सू ची ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में पहुंचीं जहां उन्होंने राजनीति और अर्थशास्त्र में उपाधि प्राप्त की । फिर वह लंदन विश्वविद्यालय में काम करती रहीं और कुछ वर्षों तक संयुक्त राष्ट्र सचिवालय में भी रहीं । एक ब्रिटिश नागरिक के साथ विवाह-बंधन में बंधने के बाद वह वापस इंगलैंड चली गयीं । वहां से वह भारत लौटीं जहां उन्होंने शिमला के भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान में गवेषणा का काम शुरू किया । वहां रहकर उन्होंने दो पुस्तकों की रचना की, एक अपने पिता के बारे में और दूसरी बच्चों के लिए बर्मा के बारे में, जिसका नाम था ''लैट्स विज़िट बर्मा'' ।

बाद में वह गवेषणा को जारी रखने के लिए लंदन चली गयीं, लेकिन मां की भीषण बीमारी के कारण उन्हें रंगून लौटना पड़ा । उस समय तक लोग जनरल नेविन के तानाशाही शासन के नीचे तिलमिलाने लगे थे । १९८८ में बर्मा में उनकी वापसी इस बात का संकेत थी कि लोगों को अब उनके साये तले एकजुट हो जाना चाहिए । स्वाभाविक ही था कि शासक उनकी उपस्थिति शक की निगाह से देखते । ८ अगस्त को छात्रों ने अपना संघर्ष छेड़ दिया जिसे बड़ी निर्दयता से दबा दिया गया । सू ची लोगों के लोकतंत्र के लिए ३० वर्ष पुराने संघर्ष को देखकर अपनी आंखें मूंदे नहीं रख सकती थीं । २ सितंबर को एक सम्मेलन हुआ जिसमें उन्होंने अंतरिम सरकार के दो और लोकप्रिय नेताओं के सहयोग से नेशनल लीग फॉर डेमोकरेसी की स्थापना की और साथ ही उसकी महासचिव भी बन गयीं ।

१९ जुलाई, १९८९ को शहीद दिवस की ४२वीं जयंती मनायी गयी । उस दिन आंग सॉन की हत्या हुई थी । सू ची एक जुलूस की अगुआई कर रही थीं । अगले ही दिन उन्हें गृहबंदी बना लिया गया । उन्हें अब तक भी अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता नहीं मिली है । रुकावटों के बावजूद उन्होंने अपनी पार्टी का पथ-प्रदर्शन किया और मई, १९९० के चुनाव में उसे विजय दिलवायी । लेकिन शासकों ने लोगों की सम्मति को स्वीकार करने से इनकार कर दिया और लोकतंत्र अब भी बर्मा में नहीं लौटा है, हालांकि पिछले वर्ष बर्मा को ''म्यांमार'' नाम दिया गया ।

नोबेल समिति ने सू ची के लोकतंत्र और मानव अधिकारों के लिए अहिंसक संघर्ष की प्रशंसा की है । शांति पुरस्कार उनके अदम्य साहस को मान्यता प्रदान करता है ।

जादूगरनी की बेटी

वह कोल्हापुर के जंगलों में लाल मिट्टी के एक टीले पर एक झोंपड़ी में रहती थी। वह एक जादूगरनी थी। वह बूढ़ी हो चुकी थी। उसकी एक बेटी भी थी। उसका नाम कमला था। कमला यौवन में कदम रख चुकी थी। वही अपनी बूढ़ी मां की सार-संभाल करती थी।

एक दिन शाम के वक्त एक युवक उस टीले पर आया। उस समय बुढ़िया अपनी झोंपड़ी के सामने एक खटिया पर बैठी तांबे-सी तारों जैसे दिखने वाले अपने बालों में अपनी बेटी से कंघी करवा रही थी।

युवक को देखते ही बूढ़ी जादूगरनी बोली, "कौन हो तुम? इस टीले पर आने की तुम्हारी जुर्रत कैसे हुई?"

"मौसी, जिसने मरने की ठान ली हो, उसे डर किस बात का? मुझे पहले किसी मुर्गे या मुर्गी में बदल डालो, फिर मुझे पकाकर खा जाओ," उस युवक ने कहा।

"मुझे पहले यह बताओ कि तुमने मरने की क्यों ठानी है?" जादूगरनी ने पूछा।

इस बीच कमला झोंपड़ी के भीतर गयी और युवक के लिए लोटे में पीने का ठंडा पानी ले आयी।

युवक पानी गटागट पी गया। फिर बोला, "मौसी, मेरा नाम सूर है। मुझे अपने पड़ोस की लड़की, अखिला, से बेहद प्यार हो गया है। उसका पिता उसके लिए कहीं और लड़का ढूंढ़ रहा है। आज सुबह मैं उससे मिला था। मैंने उससे कहा कि मैं शादी करूंगा तो केवल अखिला से ही, वरना मैं आजीवन ब्रह्मचारी रह जाऊंगा। इस पर वह आग बबूला हो गया और बोला कि मैं दो कौड़ी का भी नहीं हूं, उसकी बेटी से शादी करके उसे क्या खिलाऊंगा? उसने मेरा खूब अपमान किया और मुझे धकेलकर घर से

लोकेश्वर प्रसाद शर्मा

बाहर कर दिया । अब मुझे अपने से सख्त नफरत हो गयी है । सोचता हूं ऐसी ज़िंदगी जीने से तो मर जाना ही बेहतर है । इसीलिए मैं तुम्हें ढूंढ़ते-ढूंढ़ते यहां आया ।"

बूढ़ी जादूगरनी उठी, फिर टीले से उतरकर नीचे पोखर से एक काली बत्तख पकड़ लायी ।

"अरे, यह एक विचित्र बत्तख है । तुम इसे जब-जब अंडा देने को कहोगे, देगी । तुम दिन भर इससे अंडे लेते रहो । शाम को उन अंडों को बाजार में बेच आओ । अंडे बेचने से जितने भी पैसे मिलेंगे, उनसे तुम्हारा और तुम्हारी बीवी का अच्छा गुज़ारा होगा । यही अखिला के पिता से कह दो ।यही तुम्हारी समस्या का हल है ।"

युवक उस बत्तख को लेकर वहां से चला गया । पर दूसरे ही दिन वह फिर लौट आया । बत्तख उसके पास ही थी ।

उसे लौट आया देख बूढ़ी जादूगरनी बोली, "मैंने तो सोचा था कि तुम अब अपनी बीवी के साथ मुझ से आशीर्वाद लेने अओगे? पर तुम्हारा मुंह लटका हुआ है ।"

कमला, युवक को देखकर झोंपड़ी के भीतर गयी और एक लोटा ठंडा पानी ले आयी । युवक ने पानी पिया और फिर बूढ़ी जादूगरनी से बोला, "अखिला का बाप इस बत्तख को देखकर बोला-अगर मैं अपनी सफेद बिल्ली को तुम्हारी इस काली बत्तख पर छोड़ दूं, तो वह फौरन इसे खत्म कर देगी । बत्तख खत्म हो गयी तो तुम अखिला के लिए फिर पैसा कैसे पैदा करोगे?-मैं इस प्रश्न का क्या उत्तर देता? इसलिए मैं चुपचाप वहां से लौट आया ।"

जादूगरनी झोंपड़ी के भीतर गयी और वहां से औंधे मुंह रखी एक टोकरी उठा लायी, बोली, "इस टोकरी को औंधे मुंह रखकर जिस भी सब्ज़ी की तुम मांग करोगे, वह तुम्हारे सामने पड़ी होगी । इस तरह तुम्हें पूंजी भी नहीं लगानी पड़ेगी, और तुम्हें कमाई भी अच्छी हो जायेगी जिससे तुम अखिला को अच्छी तरह खिला-पिला सकोगे । यह बात तुम अब अपने होने वाले ससुर को बता सकते हो ।"

सूर वह टोकरी लेकर लौट गया, पर दूसरे ही दिन वह. वहां फिर आ उपस्थित हुआ ।

वह टोकरी भी उसके पास थी ।

"अब क्यों मुंह लटका रखा है?" बूढ़ी जादूगरनी ने प्रश्न किया ।

"उसने इस टोकरी की खूबियों के बारे में अभी अच्छी तरह सुना भी नहीं था कि बोला—अगर मैं इस टोकरी को आग लगा दूं, तो यह एक ही मिनट में स्वाहा हो जायेगी, और राख का ढेर बन जायेगी । उसने यह भी कहा कि मैं जो जादू उस पर चलाना चाह रहा हूं, वह नहीं चल पायेगा । अब तुम ही बताओ, मौसी, कि मैं क्या करूं," सूर ने उसी तरह रुआं-सी शक्ल बना ली ।

जादूगरनी ने कोने में पड़ा एक बक्सा खींचा और सूर से बोली, "यह गज़ब का संदूक है । इस पर हाथ रखकर तुम जो भी मांगोगे, तुम्हें मिल जायेगा । इसे देखकर तुम्हारा होने वाला ससुर खुश होगा ।"

सूर ने उस बक्से को अपने सर पर उठाया और वहां से चल पड़ा । पर दूसरे दिन वह वहां फिर आ विराजा । बक्सा भी उसके साथ था जिसे उसने झोंपड़ी के दरवाज़े पर पटक दिया ।

"क्या उस अखिला के बाप को यह बक्सा भी नज़र नहीं चढ़ा? तब वह क्या चाहता है?" जादूगरनी अब बौखला गयी थी ।

"उसकी बात अब मेरे सामने मत करो, मौसी । उसका नाम लेते ही मेरे भीतर आग लग जाती है । उसने जो कुछ मुझे कहा, वह तुम्हें बताऊं तो तुम भी मेरी तरह तिलमिला उठोगी," सूर हांफ रहा था ।

"अरे, उसकी यह मजाल!" जादूगरनी चिल्लायी, "अब तो मैं उसकी वे बातें जरूर सुनूंगी । बताओ मुझे जल्दी से । क्या बकता था वह?" जादूगरनी उफन रही थी ।

कमला पहले की तरह ही सूर के लिए एक लोटे में ठंडा पानी लायी, पर सूर को देने के बजाय उसने उसे जादूगरनी के हाथ पर रख दिया । फिर बोली, "तुम क्यों हांफ रही हो, मां? लगता है तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं ।" और यह पूछते-पूछते वह उदास हो गयी ।

जादूगरनी ने वह पानी फौरन पी डाला और उसे पीकर बोली, "अब बताओ, क्या कहा था उस घमंडी ने?"

"उसने पहले इस बक्से की महिमा सुनी ।

महिमा सुनकर वह बिलकुल अवाक रह गया । फिर किसी तरह संभला और मेरी ओर संदेह से देखता हुआ बोला-कहां से लाते हो ये सब करामाती चीज़ें? लगता है लाल टीले पर जाते हो । वहां एक जादूगरनी रहती है । वही तुम पर कृपालु हो गयी होगी! ऐसी हालत में तुम मेरी बेटी से ही शादी क्यों करना चाहते हो? उसके भी तो एक बेटी है । उसी से शादी क्यों नहीं कर लेते? जाओ, उसी के साथ तुम्हारा गठबंधन ठीक रहेगा—और यह कहकर उसने मेरी ओर देखा और अपने दांत पीसे ।" सूर ने बात बनाते हुए कहा ।

कमला ने अब वहां खड़े रहना ठीक नहीं समझा । वह तुरंत झोंपड़ी के भीतर चली गयी जैसे उसे कोई बहुत जरूरी काम याद आ गया हो ।

जादूगरनी फिर थोड़ी देर तक सोचती रही । आखिर बोली, "उसने जो कहा, मुझे उसमें कोई बुराई नहीं दिखती । लेकिन क्या तुम्हें यह प्रस्ताव मंजूर है?"

बूढ़ी जादूगरनी के प्रश्न का उत्तर देते समय सूर की ज़बान थोड़ा लड़खड़ायी । फिर किसी तरह उसने कहा, "कमला क्या मुझे पसंद करेगी?

"कमला की बात छोड़ो ।" जादूगरनी ने अपनी बात पर ज़ोर देते हुए कहा, "मैं जो कहूंगी, उसे वह मानना ही पड़ेगा । अच्छा, अब जल्दी से बताओ । शादी कब और कहां होनी चाहिए?"

"मुझे शहर में नौकरी मिल गयी है । शादी बड़े सादे ढंग से किसी मंदिर में हो जायेगी ।" सूर ने सहज होते हुए उत्तर दिया ।

दो दिन में शादी हो गयी ।

सूर जब अपनी पत्नी के साथ शहर जाने को था तो जादूगरनी ने उससे पूछा, "बेटा, क्या तुम ये तीन करामाती चीज़ें अपने साथ नहीं ले जाना चाहोगे?"

"इन की क्या ज़रूरत पड़ेगी, मौसी । मैं नौकरी करके जो कमाऊंगा, वह हमारे गुज़ारे के लिए काफी होगा । करामाती चीज़ों पर कब तक निर्भर रहा जा सकता है?" सूर बोला ।

"शाबाश, बेटे! लाखों की बात कही

तुमने ।" जादूगरनी गद्‌गद् हो रही थी ।

सूर और कमला, दोनों सवेरे-सवेरे ही शहर के लिए चल पड़े । दोपहर हुई तो वे एक पोखर के पास पहुंचे । वहां वे एक पेड़ के नीचे बैठ गये, और उन्होंने जादूगरनी द्वारा दी गयी रोटियों वाली पोटली खोली । पोटली में रोटियों के अलावा एक चिट्‌ठी भी रखी थी । चिट्‌ठी में यों लिखा हुआ था—

'बेटे, यह मत सोचना कि तुम अपनी सास से बढ़कर होशियार हो! पहले ही दिन, जब तुम मेरे यहां मुंह लटकाये आये थे, मैं ताड़ गयी थी कि तुम कमला के लिए ही आये हो । उससे पहले मैंने तुम्हें कई बार जंगल में घूमते और छिप-छिपकर कमला की टोह लेते देखा था । मेरी आंख हमेशा चौकस रहती थी । लेकिन मैं तुम्हारे प्यार को परखना चाहती थी । इसीलिए मैंने तुम्हें तरह-तरह की अदभुत वस्तुएं देकर प्रलोभन में डालना चाहा । मैं समझ रही थी कि अखिला के प्रति तुम्हारे प्यार की कहानी मनगढ़ंत है । आखिर में मैंने तुम्हें वह बक्सा दिया जिससे तुम जो भी मांगते, मिलता । पर तुमने वह भी लौटा दिया । इससे मैं समझ गयी कि तुम कमला से बहुत प्यार करते हो । अब मेरी यही कामना है कि तुम दोनों सुख-चैन से रहो और फूलो-फलो । हां, साल में एक बार-चलो एक बार ही सही-इस बुढ़िया का ज़रूर ख्याल कर लेना, मुझ से मिलने ज़रूर आना । मैं अपने को बड़ी बड़भागी समझूंगी ।"

चिट्‌ठी पढ़कर सूर और कमला दोनों की आंखें छलछला आयीं । कमला अपने आंचल से अपनी आंख पोंछती हुई बोली, "देखा, मेरी मां मुझे कितना चाहती है! वह तो फरिश्ता है, फरिश्ता । फिर भी लोग मुझे 'जादूगरनी की बेटी' कहकर पुकारते रहे ।"

"अब चिंता मत करो । अब कोई तुम्हें 'जादूगरनी की बेटी' नहीं कहेगा । सब तुम्हें 'सूर की बीवी' कहकर पुकारा करेंगे ।" और यह कहकर सूर कमला के आंसू पोंछने लगा ।

अच्छाई-बुराई

वल्लभ एक घूसखोर व्यक्ति था । घूस लेते एक बार वह पकड़ा गया । राजा ने दण्डस्वरूप उसे सेवासदन में भेजा । सेवासदन में मानसिक रूप से अस्वस्थ तथा लंबी बीमारी से पीड़ित रोगी ही रहते थे । ऐसे रोगियों की सेवा-सुश्रूषा के लिए वल्लभ जैसे अपराधियों को वहां भेजा जाता था । यही उनका दण्ड था ।

एक बार उस आश्रम में धारास नाम के महात्मा आये । सप्ताह-भर वह वहीं रहे और रोगियों की जी-जान से सेवा करते रहे ।

वल्लभ को यह सब देखकर बड़ी हैरानी हुई । उसने महात्मा धारास से कहा, "स्वामी, आप महात्मा हैं; आप यहां रोगियों की सेवा में लगे हुए हैं । क्या आपको ऐसा करते लज्जा अनुभव नहीं होती?"

"लज्जा? मानव सेवा में लज्जा कैसी? हमें तो इस पर गर्व होना चाहिए, बेटा," धारास ने आश्वस्ति के भाव से कहा ।

इस पर वल्लभ ने उन्हें अपनी कहानी सुनायी, और फिर बोला, "मैं तो आज तक यहां काम करने में लज्जा महसूस करता रहा । भविष्य में मैं भी इस कार्य पर गर्व करूंगा ।"

वल्लभ की बात सुनकर महात्मा धारास उसे डांटने लगे । "बड़े मूर्ख हो तुम! किसी को भी कोई काम बीच में नहीं छोड़ना चाहिए । यदि तुम अब तक इस कार्य पर लज्जा महसूस करते रहे हो तो लज्जा ही महसूस करते रहो ।"

दरअसल, महात्मा धारास तो वहां मानव-सेवा के लिए आये थे और वल्लभ वहां दण्ड भोगने आया था । जो भी वे काम कर रहे थे, उसकी श्रेष्ठता उसके कारण पर निर्भर करती थी, उसकी अच्छाई-बुराई पर नहीं । अब वल्लभ की समझ में यह बात आ गयी थी । उसने उसी क्षण से अपनी बुराई से मुक्ति पाने का निश्चय किया और तभी से सब ने महसूस किया कि उसके चेहरे पर एक नयी रंगत आने लगी है ।

—बिंदुबीप्पा
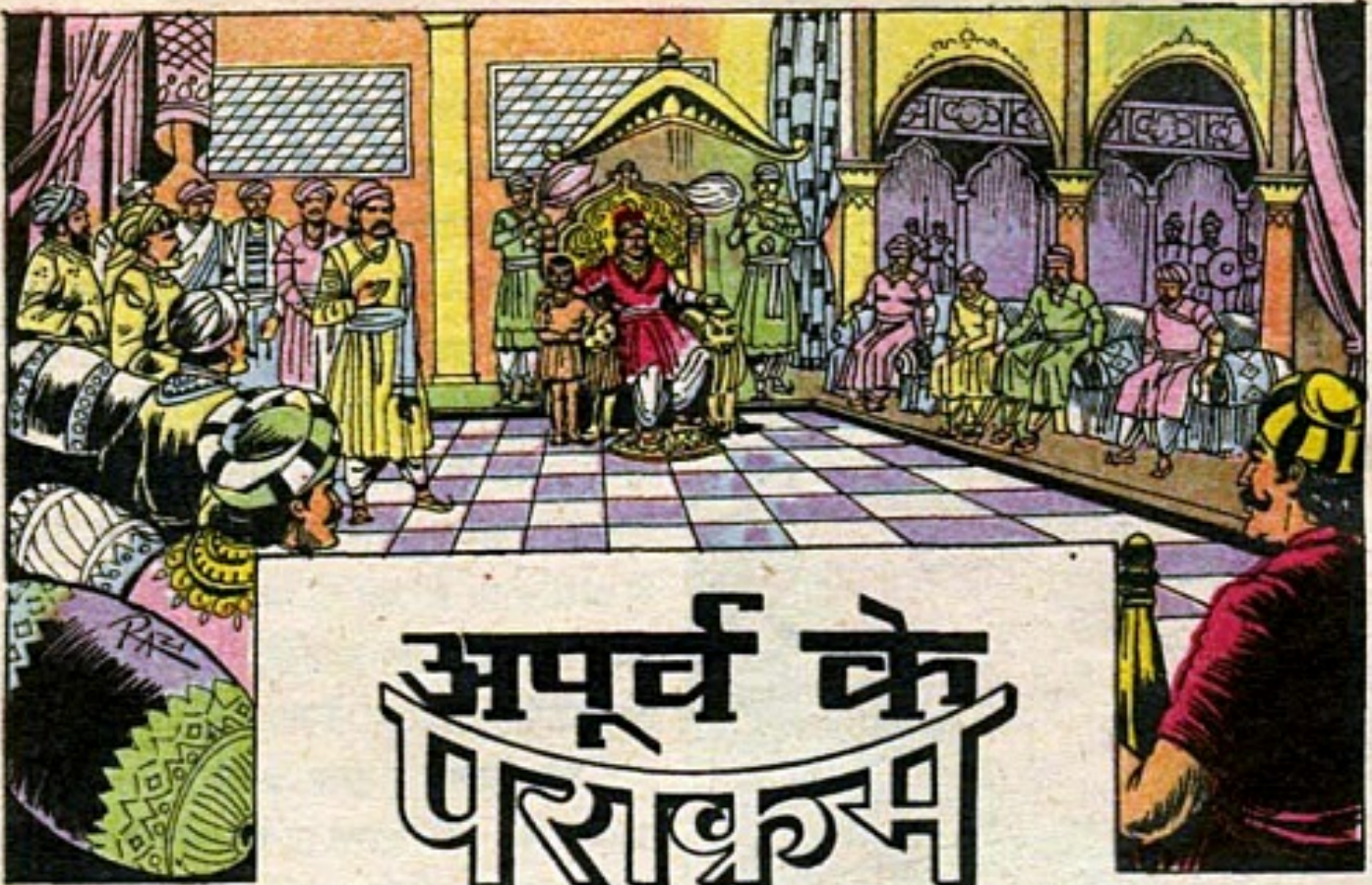
अपूर्व के पराक्रम

(हिमालय की ऊंचाइयों पर एक ऋषि द्वारा किये गये यज्ञ में से प्रकट हुए गड़िया-समान नन्हें से अपूर्व ने संकट में फंसे कई लोगों की जान बचायी है। साथ ही उसने दुष्टों को भी अपना जीवन सुधारने और बेहतर ढंग से जीने का अवसर दिया है। —अब आगे पढ़ो।)

भूमि पर डाकुओं और समुद्र में लुटेरों के पकड़े जाने से राज्य में सुख-शांति आ गयी। चारों तरफ यह खबर भी फैल गयी कि एक अतिमानव लोगों की बराबर रक्षा कर रहा है और कोई भी खुराफात उसकी नज़रों से बच नहीं सकती। इस खबर ने काफी असर किया।

राजा तो नेक था ही। समीर अब उसका सलाहकार बन गया था। वक्त बीतता गया।

केवल समीर को ही इस बात की जानकारी थी कि अपूर्व हिमालय पर उसी ऋषि के यहां समाधि लिये है जिसने उसकी यज्ञ की अग्नि में से उत्पत्ति की थी। समीर को एक वरदान भी प्राप्त था—वह जब कभी अपूर्व का ध्यान करेगा, अपूर्व तुरंत उसके सामने प्रकट हो जायेगा। लेकिन बात-बात पर समीर अपूर्व को यों ही परेशान करना नहीं चाहता था।

दूर-दराज़ हिमालय की अपनी गुफा में बैठे ऋषि सदानंद ने अपूर्व से कहा, "पुत्र, तुम से पहले कई ऋषियों-मुनियों ने तपस्या

"ऐसी बात नहीं, पुत्र! तुम मेरी कसौटी पर खरे उतरे हो । मुझे तुम पर काफी गर्व है ।" ऋषि सदानंद ने तपाक से कहा ।

"मैं आपके प्रति कृतज्ञ हूं । पृथ्वी पर अब सब ठीक-ठाक ही चल रहा है । कुछ समस्याएं तो हमेशा रहेंगी ही । उन समस्याओं का समाधान लोगों को स्वयं ही ढूंढ़ना होगा । मानव जीवन सदा ही संघर्ष से भरा होता है, यह तो आप जानते ही हैं । स्वयं संघर्ष और प्रयास करेंगे तो उनका विकास हो सकेगा ।" अपूर्व ने कहा ।

"तुम बिलकुल ठीक कहते हो । लेकिन, शायद तुम नहीं जानते हो कि मानवीय प्रकृति बड़ी पेचीदा होती है । कुछ लोग ऐसे हैं जिन्हें अमन-चैन से संतोष नहीं होता । ये लोग हमेशा कुछ न कुछ समस्या मोल लिया करते हैं । ये लोग बड़े अजीब होते हैं । उन्हें किसी भी कीमत पर आत्म-तुष्टि चाहिए ।" ऋषि ने गहरी सांस लेते हुए कहा ।

अपूर्व ने अब ऋषि सदानंद की ओर उत्सुकता से देखा और प्रश्न किया, "क्या ऐसे कुछ लोग अब कोई नयी खुराफात करना चाहते हैं?"

"हां, पुत्र । वे उन डाकुओं और लुटेरों से कहीं ज़्यादा भयानक हैं जिनसे तुम्हें निपटना पड़ा और जिन को तुमने अच्छे रास्ते पर लाकर बड़ा अच्छा काम किया था । डाकू और लुटेरे तो बिलकुल साधारण लोग थे । जिनकी मैं चर्चा कर रहा हूं, वे समाज के प्रतिष्ठित लोग हैं । उनमें से कुछ बड़े-बड़े पदों पर हैं,

और योगाभ्यास किया है । उन योगियों को अपने कठिन अभ्यास का अच्छा फल भी मिला था । लेकिन तुम्हें वह सब नहीं दुहराना है जो उन्होंने किया था । तुम्हारी भूमिका दूसरी है जो उन सबकी भूमिका से काफी भिन्न और खास है । मैंने तुम्हें अपरिमित यौगिक शक्ति का एक छोटा-सा अंश ही दिया है और वह शक्ति एक ही बिंदु पर केंद्रित रही है । इसके पीछे मेरा उद्देश्य यही रहा कि तुम इस शक्ति का लोगों की भलाई के लिए इस्तेमाल करो ।"

"क्या मैंने ऐसा नहीं किया है? क्या मैं आपकी कसौटी पर पूरा नहीं उतरा?" अपूर्व ने विनम्रता से पूछते हुए ऋषि सदानंद के मन का विचार सही-सही जानना चाहा ।

कुछ और तो अपार धन-संपत्ति से सुसंपन्न धनवान हैं और कुछ दिमागी ताकत रखते हैं जो अपने आप को कहीं बृहस्पति से बुद्धिमान मानकर चलते रहते हैं," ऋषि ने कुछ विचारते हुए कहा ।

"वे क्या करना चाहते हैं, पिताश्रेष्ठ?" अपूर्व ने जानना चाहा ।

"इसका तुम्हें स्वयं पता लगाना होगा । एक बार जब मैं मानव जाति के भविष्य के बारे में चिंतित था और वही सब सोचते-सोचते समाधि में उतर गया था, तो मेरे सामने एक बड़ा विचित्र दृश्य उभरा था । मैंने देखा कि दो व्यक्ति गुप्त-वार्त्ता कर रहे हैं । वे दोनों प्रतिष्ठित व्यक्ति थे और उनके इरादे ठीक नहीं थे ।

"उनमें से एक को मैं जानता था । वह राजा का मुख्यमंत्री था । दूसरा आदमी कौन है, यह मैं नहीं जानता । मैंने सुना कि वे अगले दिन, रात के समय, एक और बैठक करेंगे । लेकिन अफसोस की बात यह थी कि उनके षड्यंत्र का मैं विवरण नहीं जान पाया । मेरा सुझाव है कि तुम तुरंत मुख्यमंत्री के निवास पर पहुंचो और स्थिति का स्वयं जायज़ा लो । यह जानने की कोशिश करो कि वे कैसा-कैसा षड्यंत्र कर रहे हैं और उसे कैसे रोका जाय ।"

* * *

संध्या उतर आयी थी । रुद्रपुर नगर के मंदिरों में घंटियों और शंख की ध्वनि होने लगी थी ।
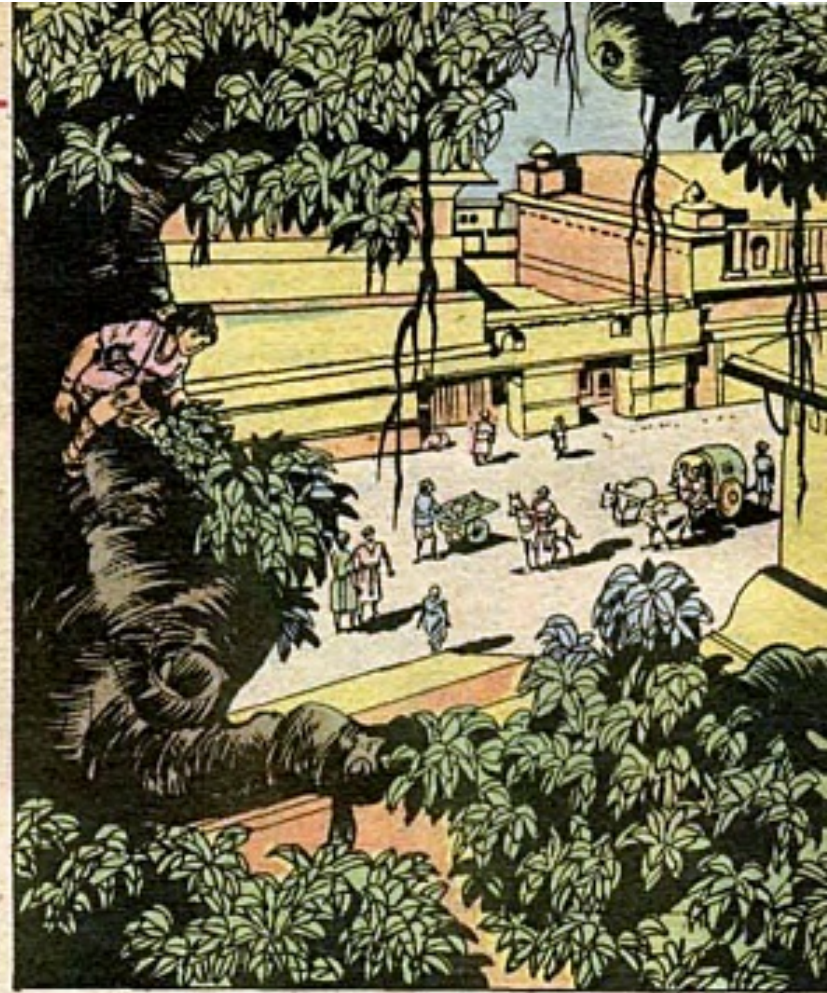
राजा के महल और मुख्यमंत्री के भवन के बीच एक बरगद का विशाल पेड़ था । अपूर्व उसी की एक शाखा पर जा बैठा जिस पर किसी की नजर पड़ने की गंजाइश नहीं, चूंकि बरगद के पत्ते घने थे जिन में वह नन्हा सा मानव छिपा बैठा था । वह मुख्यमंत्री के निवास के भीतर घुसने के अवसर की ताक में रहा ।

वह काफी देर वहीं पेड़ की शाखा पर बैठा-बैठा इंतज़ार करता रहा । अंधेरा गहराता जा रहा था । इंतज़ार करते-करते वह ऊबने लगा था । इतने में उसे कुछ खुशी-भरा शोर सुन पड़ा । फिर उसने देखा कि कुछ लोग महल के सामने खुले मैदान में चहलकदमी करते हुआ उत्तेजित हो रहे हैं आपस में कुछ बोल रहे हैं ।
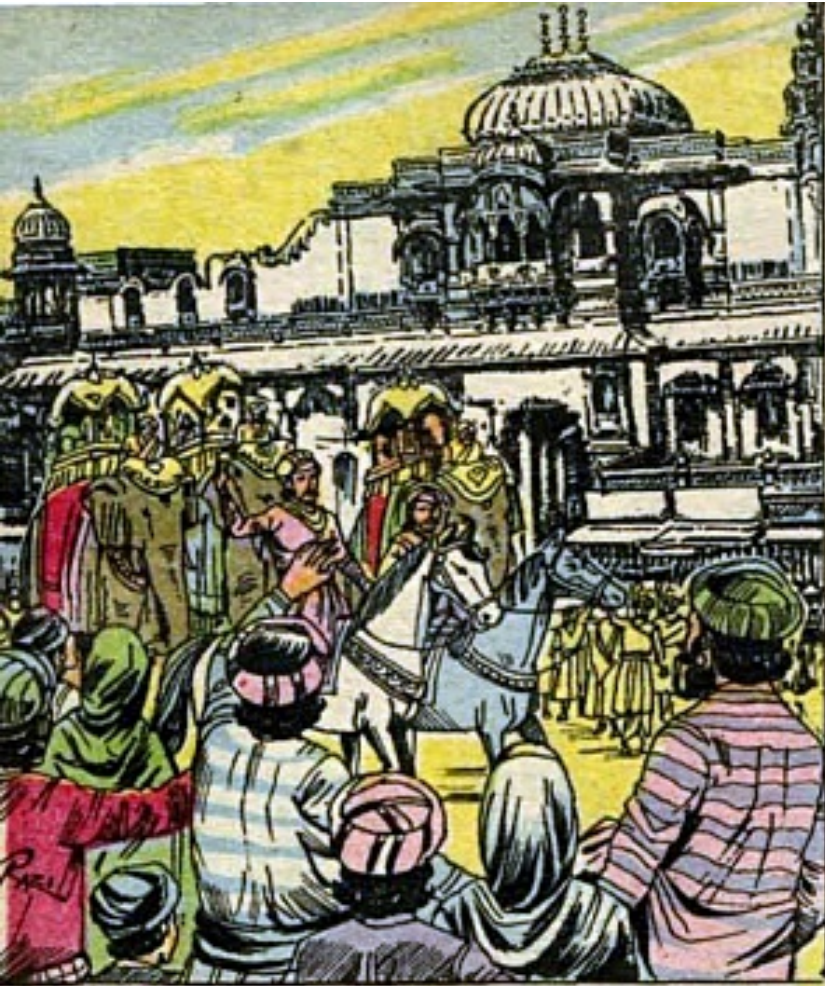
"क्या माजरा है?" एक राहगीर ने एक कर्मचारी से पूछा ।

"हमारी राजकुमारी कृष्णकुमारी रूपकुंज से अपने मामा के यहां से लौट रही है । वह अपने मामा रूपंकुज के राजा के पास जाकर पिछले छः महीनों से वहीं पर थी," उस कर्मचारी ने उत्तर दिया ।

जल्दी ही वह जुलूस महल के प्रांगण में पहुंच गया । राजकुमारी एक सुंदर हाथी की पीठ पर कसे हीरों-जड़े हौदे में बैठी थी और उसके सर पर सोने का छाता साया दे रहा था । बाकी दो हाथियों पर, जिनमें से एक राजकुमारी के हाथी के आगे-आगे चल रहा था और दूसरा राजकुमारी के हाथी के पीछे-पीछे, चार परिचारिकाएं बैठी थीं । उन तीनों हाथियों के आगे और पीछे, सुसज्जित घोड़ों पर राजकुमारी के अंगरक्षक बैठे हुए साथ-साथ चले आये थे ।

पहले अपने-अपने हाथियों पर से परिचारिकाएँ उतरीं, फिर वे राजकुमारी के हाथी के निकट जल्दी-जल्दी चली आयीं ।

फिर राजकुमारी के हाथी के महावत ने हाथी को कोई संकेत दिया और इस पर राजकुमारी का हाथी झुककर बैठ गया ।

उससे सटाकर एक गद्देदार सोपान रखा गया । राजकुमारी ने उसी पर पांव रखा और नीचे उतरी ।

राजा विश्ववर्मा अपनी बेटी की अगुआनी करने स्वयं आया था । जैसे ही राजकुमारी ने उसे देखा, वह दौड़कर उसकी फैली भुजाओं में सिमट गयी ।

"आओ, मेरी प्यारी बेटी, दो-दो घरों की दुलारी बेटी, तुम्हारा स्वागत है ।" राजा ने तपाक से कहा ।

राजा ने जो कहा था, उसका विशेष अर्थ था । कृष्णकुमारी के मामा राजा जयवर्मा के कोई संतान न थी । दूसरे, वह कृष्णकुमारी से प्यार भी बहुत करता था, खासकर तब से जब से उसकी बहन, यानी कृष्णकुमारी की मां, का देहांत हुआ था । एक प्रकार से कृष्णकुमारी अपने मामा और रूपकुंज राज्य के राजा जयवर्मा के यहां ऐसी देखा जाती थी गोया वही उस देश की युवरानी है । इसका कारण था राजा जयवर्मा का निःसंतान होना । अब यहां रुद्रपुर में देखा

जाय तो कृष्णकुमारी का कोई भाई नहीं था। इसलिए वह रुद्रपुर राज्य की भी उत्तराधिकारी थी। राजा विश्ववर्मा ने अपनी पत्नी के देहांत के बाद दूसरी शादी करने से इनकार कर दिया था। इसलिए राजकुमारी से जो भी शादी करता, वह रुद्रपुर और रूपकुंज दोनों राज्यों का स्वामी बनता। कृष्णकुमारी के लिए रूपकुंज और रुद्रपुर दोनों समान थे।

"यह क्या है?" राजा की नज़र जब अपनी बेटी के गले में पड़े हार के दमकते नग पर पड़ी तो उसने बड़े आश्चर्य के साथ उस नग की ओर देखते हुए पूछा।

"पिताजी, मैं और धनी हो गयी हूं," राजकुमारी ने अपनी आंखों में चमक लाते हुए कहा।

राजा ने नग को अपने हाथ में लिया और उसे गौर से देखने लगा। फिर बोला, "अरे, क्या यह वही नग नहीं है जिसे चंद्रप्रकाश हीरा कहते हैं?"

"वही है, पिता जी। आप का अनुमान सही है, अभी तक यह नग खज़ाने में पड़ा हुआ था। मामा का कहना था कि यह शाही खज़ाने में क्यों पड़ा रहे, इसका इस्तेमाल होना चाहिए। अब क्योंकि दोनों राज्यों में अमन-चैन है, इसलिए उन्होंने चाहा कि यही शुभ समय है और इसे मैं पहन लूं। इसके लिए उन्होंने उस नग से एक सुंदर हार भी बनवाया। आपको यह पसंद है न?"

राजा विश्ववर्मा ने अपनी बेटी का माथा

चूमा और बोला, "तुम्हारे मामा बड़ नेक इनसान हैं।"

"जो आपको कभी दूर का सितारा लगता था, वह अब आपकी पकड़ में है।" तांत्रिक ने हंसते हुए कहा, "अब आप उस पर आसानी से हाथ रख सकते हैं।" मंत्री चुपचाप उस तांत्रिक की बातें सुन रहा था और ऐसा लगता था कि उन बातों का उस पर अद्‌भुत प्रभाव हो रहा है।

"आपका क्या ख्याल है—क्या यह इतनी आसानी से होने वाला था? बिलकुल नहीं। मुझे इसके लिए अपनी पूरी ताकत लगा देनी पड़ी। मैंने रूपकुंज के राजा जयवर्मा के मन को परिवर्तित कर दिया है। उसे पता भी नहीं चला होगा, लेकिन मैंने रूपकुंज
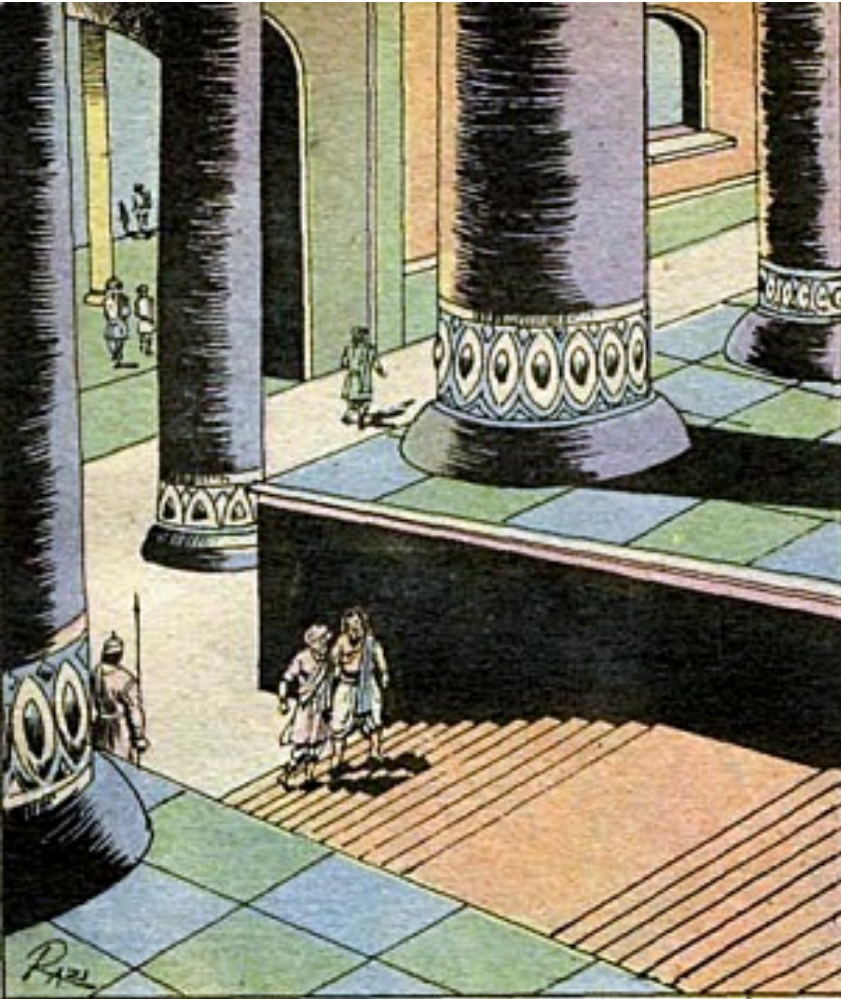
के राजा के दिल में ऐसी भावना भर दी जिससे उसने फौरन राजकुमारी के गले में चंद्रप्रकाश हीरा पहना दिया ।"

"मैं समझ रहा हूं, पवित्र आत्मा!" मुख्य मंत्री ने अपना सर हिलाया ।

पवित्र आत्मा! वाह, कितनी लज्जा की बात! यह तो दो अपवित्र व्यक्तियों के बीच बहुत ही अपवित्र संधि है, 'पवित्र आत्मा' शब्द के लिए ही यह अपमानजनक बात है, अपूर्व ने सोचा । वह छिपकर उनकी तमाम बातें सुन रहा था ।

"हम खुशकिस्मत हैं कि न रूपकुंज के राजा जयवर्मा को इस हीरे की खूबियों की जानकारी है और न ही रुद्रपुर के राजा विश्ववर्मा को । उन्हें तो बस इतना ही पता है कि यह दुनिया का एक अलभ्य हीरा है । इसके गुणों की उन्हें कोई खबर नहीं," तांत्रिक ने कहा और फिर वह खीं-खीं करके भद्दी आवाज में हंसने लगा ।

लगभग एक घंटे तक उनकी गुप्त वार्त्ता चलती रही ।

अपूर्व बस इतना ही समझ पाया कि मुख्य मंत्री और तांत्रिक दोनों लड़कपन में साथ-साथ एक ही गुरुकुल में पढ़ते थे, और उनके गुरु के गुरु ने रूपकुंज के वर्तमान राजा के दादा को यह बेशकीमती और अद्भुत खूबियों वाला हीरा भेंट में दिया था ।

तब से लेकर आज तक, यानी लगभग तीन पीढ़ियों तक यह हीरा रूपकुंज के राजघराने के निजी खज़ाने में यों ही पड़ा रहा ।

तांत्रिक को, जब एक पुरानी पाण्डुलिपि का वह बारीकी से अध्ययन करने लगा तो इस हीरे के विचित्र गुणों का पता चला था ।

उसके अनुसार यह हीरा जिसके पास होगा, और इसे पहनकर जो निष्ठा के साथ कुछ विशेष पूजाएं करेगा, वह शीघ्र ही इस हीरे की महिमा के बलबूते पर महाराजाधिराज होगा, यानी बाकी सब राजा उसके अधीन होंगे, बशर्ते कि वह उस विशेष अनुष्ठान को बड़ी निष्ठा के साथ उस ग्रंथ में बतायी विधि के अनुसार करे । तांत्रिक ने एक उपाय कर लिया कि उसे कैसे हासिल करे और उस ने एक दिन रूपकुंज के राजा को अलग से मिलकर यह बता दिया था कि राजकुमारी कृष्णकुमारी फिलहाल कुछ दुरात्माओं की चपेट में है और उनसे वह तभी मुक्त हो सकती है जब वह कीमती से कीमती हीरा पहने ।
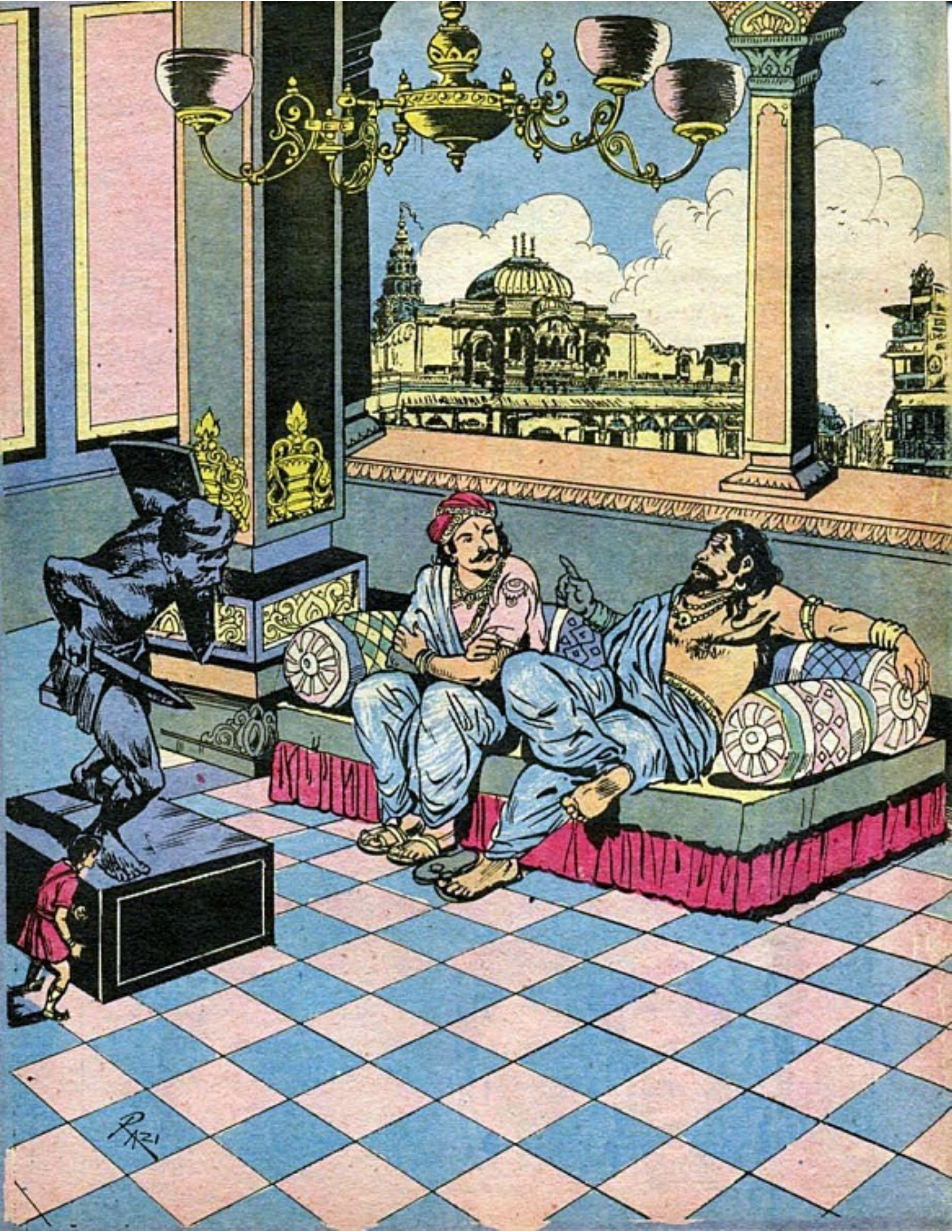
मामा तो अपनी भांजी को दिलोजान से चाहता ही था। वह राजकुमारी कृष्णकुमारी को अपनी लाड़ली बेटी के समान लाड़-प्यार देता था। फिर वह कैसे चुप रह सकता। इस लिए उसने अपनी भांजी को उन दुरात्माओं के प्रभाव से बचाने के लिए चन्द्रप्रकाश हीरा खज़ाने से मंगवाकर हार बनवा दिया और उसने बिना कुछ बताये वह हार उसे भेंट कर दिया।

उधर तांत्रिक ने मुख्यमंत्री के सामने यही डींग मारी थी कि उसने अपनी तांत्रिक शक्ति के बल पर रूपकुंज के राजा को वह हीरा राजकुमारी को देने पर मजबूर कर दिया था, जबकि असलियत कुछ और थी जो मुख्यमंत्री को मालूम हो ही नहीं सकती थी।

मुख्य मंत्री अपने तांत्रिक मित्र के सौजन्य से महाराजाधिराज बनने के सपने ले रहा था। अत्याशा बहुत बुरी चीज है और उस की चपेट में आकर आदमी लज्जा, अपमान का डर, सब कुछ छोड़कर घटिया से घटिया आदमी बन जाता है। मुख्य मंत्री के मामले में भी ऐसा हुआ, क्यों कि उस के मन में तांत्रिक ने महाराजाधिराज बनने का अत्याशा रूपी विष घोल दिया था।

अपूर्व समझ गया था कि एक बार अगर अनुष्ठान करने के बहाने वह हीरा तांत्रिक के हाथ लग गया तो वह उसे अपने कब्ज़े में कर लेगा और मुख्य मंत्री को अपनी करनी का पश्चात्ताप तब करने का अवसर आएगा जब उसे पता चलेगा कि तांत्रिक मित्र ने उसे अच्छी तरह ठगा था, या जब वह चालाक तांत्रिक मूर्ख मुख्य मंत्री को एक तरफ करके स्वयं उस हीरे की महिमा से सर्वशक्तिमान महाराजाधिराज बन जायेगा।

अपूर्व लोगों की आंखों से ही उनके चरित्र को जान लेता था। उसने पहचाना कि मुख्य मंत्री यदि महा मूर्ख है तो तांत्रिक स्वार्थी और दुष्ट है। ऐसे लोग समाज के लिए बहुत खतरनाक साबित होते हैं, क्यों कि ये लोग लोभ में कुछ भी कर गुज़र सकते हैं।

अगर ऐसा व्यक्ति सब राजाओं का राजा बन गया तो मानव जाति का क्या होगा? अपूर्व को अब यही चिंता सता रही थी।

योग्यता और यश

अपनी धुन के पक्के राजा विक्रम फिर से पेड़ के पास गये, उन्होंने पेड़ की शाखा पर लटकती लाश को वहां से उतार कर अपने कंधे पर डाला और फिर पहले की तरह मौन साधे श्मशान की ओर बढ़ने लगे। तब लाश में मौजूद बैताल बोला, "राजन्, मैं समझ नहीं पा रहा कि आप इतना कष्ट क्यों उठा रहे हैं। शायद जिस मुनि या गुरु के प्रति आप श्रद्धा-भाव रखते हैं, उसी से आदेश पाकर आप यह सब कर रहे हैं। कुछ मुनि, गुरु ऐसे भी होते हैं जिनके विचार संतुलित नहीं होते। यदि आप ऐसे ही किसी गुरु के लिए इतना कष्ट उठा रहे हैं तो अंत में आपके हाथ निराशा-हताशा ही लगेगी। मैं आपको विश्वमीत नाम के एक मुनि की कहानी सुनाने जा रहा हूं जिसने अपने समान रूप से योग्य दो शिष्यों के प्रति असंतुलित होने के कारण विद्वेषपूर्ण व्यवहार किया। कहानी सुनाने से आपका ध्यान बंटा

बैताल कथाएँ

रहेगा और आपको थकान भी महसूस नहीं होगी ।" यह कहकर वह उन्हें मुनि विश्वमीत की कहानी सुनाने लगा :

मुनि विश्वमीत दूर के एक जंगल में रहते थे । उनके आश्रम में अनेक शिष्य थे जिन्हें वह तप करने की विधि और मोक्ष-साधना संबंधी उपदेश दिया करते थे ।

इन शिष्यों में दो ऐसे शिष्य भी थे जिन्हें उन्होंने अपने तपोबल से अद्भुत शक्ति प्रदान की थी । वे हर दृष्टि से अन्य शिष्यों से आगे थे । उनके नाम थे लोकप्रिय और शक्तिकिरण ।

एक दिन मुनि ने उन्हें अपने पास बुलाया और बोले, "तुम दोनों मेरे शिष्यों में विशिष्ट हो । तुमने अपनी शिक्षा पूरी कर ली है । तुम अब अपने-अपने स्थान को लौट जाओ और गृहस्थ-जीवन का सुख लो ।"

दोनों शिष्यों ने गुरु की आज्ञा का पालन करने के उद्देश्य से अपना-अपना सर हिलाया, बोले, "गुरुदेव, हम दोनों अद्भुत शक्ति से संपन्न हैं । आपने हमें केवल शाप देना ही सिखाया है । कृपया उस शाप को वापस लेने की विधि भी बतायें । नहीं तो अनर्थ भी हो सकता है ।"

मुनि विश्वमीत ने उन दोनों को आश्रम में एक-एक महीना और रहने को कहा । दो सप्ताह बीत गये थे । एक दिन उन्होंने शक्तिकिरण से कहा, "शाप मुक्ति, की विधि का स्वमी होने के लिए तुम्हें बहुत कठोर तप करना होगा । यह हर किसी के बस का नहीं । पर मैं तुम्हें वह अवश्य सिखाऊंगा ।"

शक्तिकिरण बहुत खुश था । तप शुरू हो चुका था । लोकप्रिय से विश्वमीत बोले, "पुत्र, तुम्हें मैं यह विधि नहीं सिखा सकता । इसलिए तुम्हें यहां रुकने की आवश्यकता नहीं । तुम जा सकते हो । पर हां, तुम्हें अपनी शक्ति का बड़ी सावधानी से इस्तेमाल करना होगा ।" और यह कहकर मुनि विश्वमीत ने लोकप्रिय को वहां से रवाना कर दिया । और जब शक्तिकिरण ने शाप मुक्ति की दीक्षा पूरी कर ली, तो वह भी चल दिया ।

इसी तरह पांच वर्ष बीत गये । एक दिन उस राज्य के शासक, राजा मानसेन का मुनि

विश्वमीत के नाम बुलावा गया। राजा ने उनके लिए विशेष रथ भेजा था।

दरअसल, राजा मानसेन राजगुरु पद के लिए एक समर्थ साधक का चुनाव करना चाहते थे। हर किसी ने उन्हें यही सूचना दी कि उस पद के लिए केवल दो ही व्यक्ति उपयुक्त हैं, और वे हैं शक्तिकिरण तथा लोकप्रिय। तब तक शक्तिकिरण ने काफी कीर्ति पा ली थी। उसकी शक्ति की हर किसी पर धाक थी। सब उससे डरते थे। कोई भी कहीं गलत काम करने की जुर्रत नहीं करता था। हर कोई अपने आप सीधे रास्ते पर चल रहा था। शक्तिकिरण के सैकड़ों शिष्य भी थे। उनमें से कुछ शक्ति सेना के रूप में संगठित हो गये थे और देश में फैले दुष्टों को चुन-चुन कर ठिकाने लगा रहे थे। शक्तिकिरण के शाप का डर भी लोगों में समाया हुआ था। इसलिए कोई भी उनसे भिड़ने या उनका सामना करने का साहस नहीं जुटा पाता था।

लोकप्रिय ने शक्तिकिरण के समान यश नहीं बटोरा। उसके शिष्य भी बहुत कम थे। वह अक्सर आम लोगों के बीच जाकर तत्वोपदेश दिया करता, और उन्हें तरह-तरह की कथाएं-उपकथाएं सुनाता ताकि वे सही मार्ग पर चलें। उन लोगों में उसके प्रति बहुत स्नेह था, पर वे उसकी अद्भुत शक्ति के बारे में कोई ज्ञान नहीं रखते थे।

मानसेन शक्तिकिरण को ही राजगुरु बनाना चाहता था, लेकिन शक्तिकिरण चाहता था कि यह सम्मान लोकप्रिय को
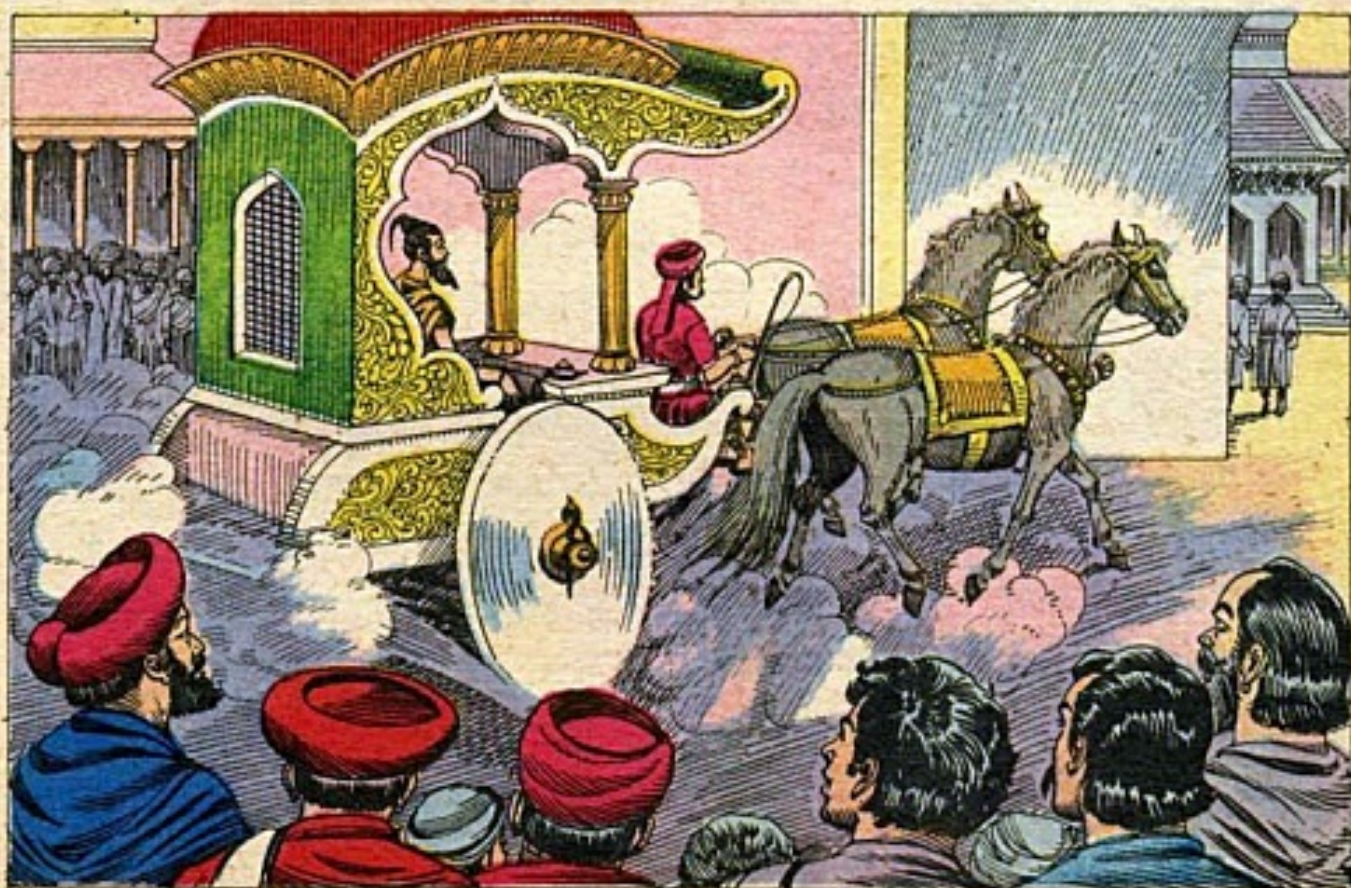
मिले। वह राजा से बोला, "हम दोनों हर बात में समान हैं। हम दोनों में से राजगुरु पद के लिए कौन योग्य होगा, यह तो हमारे गुरु विश्वमीत ही बतायेंगे। हम उनकी अनुमति के बिना इसके बारे में कुछ नहीं कह सकते।"

राजा ने यह सब मुनि विश्वमीत को बताया। सब कुछ सुन चुकने के बाद विश्वमीत बोले, "यह सच नहीं कि मेरे दोनों शिष्य एक-समान योग्य हैं। योग्यता की दृष्टि से ही देखना है तो लोकप्रिय का कोई मुकाबला नहीं। इसलिए राजगुरु उसी को बनना चाहिए। यह मेरी इच्छा भी है।"

राजा मानसेन ने बिना किसी तर्क-वितर्क के लोकप्रिय को राजगुरु मान लिया और अपनी स्वीकृति दे दी।

बैताल अपनी कहानी खत्म कर चुका था। अब वह राजा विक्रम से बोला, "राजन्, गुरु विश्वमीत के व्यवहार पर आपको अचंभा नहीं हो रहा? पर यह तो शुरू में ही स्पष्ट हो गया था कि उनका रवैया दोनों शिष्यों के प्रति एक-समान नहीं था, बल्कि पक्षपातपूर्ण था। पहले उन्होंने लोकप्रिय को एक तरफ करके शक्तिकिरण को शाप-मुक्ति की विद्या दी और उसके प्रति स्नेह भी दिखाते रहे। फिर जब राजगुरु बनने की बारी आयी तो उन्होंने शक्तिकिरण को एक तरफ़ कर दिया और लोकप्रिय के लिए राजा से सिफारिश की। क्या इस सब से यह प्रमाणित नहीं होता कि गुरु विश्वमीत अपना संतुलन खो चुके थे, और इसीलिए उनका मन डावाडोल होता रहता था। हो सकता है यह सब मेरा संदेह ही हो। आप इस संदेह को दूर करें ताकि मुझे चैन मिले। आप जान बूझकर यदि उत्तर नहीं देंगे तो आपका सर फट जायेगा।"

बैताल की कठिन शर्त सुनकर राजा विक्रम को बोलना पड़ा, "दुनिया में ऐसे कई लोग हैं जिनके पास अनेक योग्यताएं हैं, पर यश उनके आस-पास नहीं फटकता। वास्तव में यश या कीर्ति की आकांक्षा सामान्य जन में ही होती है। यह आकांक्षा शक्तिकिरण में भी थी। उसने इसके लिए अपनी अद्भुत शक्ति का इस्तेमाल भी किया। इसलिए हम उसे एक सामान्य या साधारण जन ही

मानेंगे । इसके विपरीत लोकप्रिय में भी यद्यपि वह अद्भुत शक्ति थी, पर उसने उसका कहीं कोई दिखावा नहीं किया । इसलिए वह असाधारण जन माना जायेगा । इस तर्क में कहीं विवाद की गुंजाइश नहीं । किसी को शाप देना, फिर वह शाप वापस लेना, यह सब शक्तिकिरण तो सोच सकता था, पर लोकप्रिय इन मामलों से दूर था । इसीलिए मुनि विश्वमीत की निगाहों में लोकप्रिय ज्यादा ऊंचा था और इसीलिए उन्होंने उसके पक्ष में निर्णय लिया । हम उनके निर्णय को किसी तरह से भी पक्षपातपूर्ण नहीं कह सकते, न ही उनमें किसी प्रकार का असंतुलन था । वह जानते थे कि शाप वापस लेने की विधि उसे ही सिखानी चाहिए जो उतावली में किसी को शाप दे सकता हो । लेकिन जो उतावली में कभी आये ही नहीं, उसे यह विधि सिखाने की क्या आवश्यकता है? यानी, जो ज्ञानी है, शांत स्वाभाव का है, वह छोटी-मोटी बात पर क्रोध नहीं करेगा । इसलिए उसके पास चाहे कितनी भी शक्ति हो, वह उसका कभी दुरुपयोग नहीं करेगा । मुनि विश्वमीत को लोकप्रिय पर अटूट विश्वास था । इसीलिए उन्होंने उसे आश्रम से चले जाने को कहा । उधर शक्तिकिरण को जब शाप-मुक्ति में दीक्षा मिली, तो यह एक प्रकार से उसकी अपरिपक्वता की सूचक थी । इससे उसको कोई मान नहीं मिला । इसीलिए मुनि विश्वमीत ने लोकप्रिय को राजगुरु पद के लिए ज्यादा उपयुक्त समझा । इससे एक और बात भी स्पष्ट होती है कि यश और योग्यता की श्रेष्ठता, ये दोनों अलग-अलग हैं, और जो सफल है, जरूरी नहीं कि वह योग्य भी हो ।"

बैताल को सही उत्तर मिला था । पर इसके साथ ही राजा विक्रम का मौन भी भंग हो चुका थ । इसलिए बैताल लाश-समेत वहां से एकदम ग़ायब हो गया और फिर उसी पेड़ की शाखा से लटकता हुआ दिखाई देने लगा । (कल्पित)

[आधार : वसुंधरा की रचना]

हिनहिनाता घोड़ा

गौतमपुर नाम के एक गांव में सोमू नाम का एक किसान रहता था। उसके एक बेटा था लीमन। लीमन सोलह वर्ष का हो चला था, पर वह अपने बाप के काम में बिलकुल हाथ नहीं बंटाता था। तमाम दिन वह आवारा घूमता और खेतों-खलिहानों की खाक छानता।

एक दिन सोमू ने लीमन से कहा, "अरे, ऐसे ही बेकार घूमते रहते हो। कोई तो काम करो। काम करोगे तो सही, वरना भूखों मरने की नौबत आ सकती है।"

बाप के इस उलाहने को सुनकर लीमन को बहुत गुस्सा आया। वह ज़ोर से बोला, "कौन-सा काम करूं? आप ही बता दो न।"

सोमू ने अपनी आवाज़ धीमी कर ली और बोला, "सुनो, हमारा ज्वार का खेत कटाई के लिए तैयार हो रहा है। उसकी रखवाली करना ज़रूरी है। तुम वहीं चले जाया करो।"

लीमन ने हामी भर दी और खेत के लिए रवाना हो गया। पर खेत पर पहुंचकर उसे बड़ा अजीब लगने लगा। अब रखवाली करना भी कोई काम है! खाली-खाली रहने से उसे परेशानी होने लगी। हां, वह इधर पक्षियों और पशुओं की आवाज़ों को गौर से ज़रूर सुनने लगा था। उसने उन्हीं की नकल करना शुरू कर दिया और होते-होते उसे इसमें इतनी महारत हासिल हो गयी कि वह हर पशु-पक्षी की आवाज़ बड़ी आसानी से निकालने लगा।

गौतमपुर गांव श्रीपुर के ज़मींदार की ज़मींदारी में पड़ता था। घोड़े की सवारी करना ज़मींदार का एक खास शौक था। वह हर दशहरे पर अपना घोड़ा बदलता और नये घोड़े पर सवार होकर अपने इलाके का चक्कर लगाता। इससे उसे अपनी ज़मींदारी के लोगों से मिलने-जुलने और उनका हालचाल पूछने का मौका मिलता।

उदयकुमार शर्मा

इस बार दशहरे के मौके पर उसने जो घोड़ा खरीदा था, वह था तो बहुत सुंदर, पर मुंहजोर भी बहुत था। जिधर का रुख कर लेता, उधर ही भागता रहता, और हर तरह से रोकने पर भी काबू में न आता।

एक दिन ज़मींदार जब उस घोड़े पर सवार होकर अपने भ्रमण पर निकला था, घोड़ा बिलकुल बेकाबू हो गया। वह बेतहाशा दौड़े ही जा रहा था और कहीं रुकने का नाम नहीं लेता था। दौड़ते-दौड़ते इत्तफाक से वह गौतमपुर गांव पहुंचा।

गौतमपुर के लोगों से ज़मींदार की लाचारी छिपी न रही। वे घबराये-से घोड़े के पीछे-पीछे दौड़ने लगे ताकि किसी तरह ज़मींदार को बचाया जा सके। पर घोड़े की उग्रता तो और भी बढ़ गयी थी। वह तो जो भी उसके निकट आता, उसे दुलत्ती मारता और ज़ोर-ज़ोर से हिनहिनाये जाता। उसने इस तरह दौड़ते-दौड़ते कई खेतों को रौंदकर बरबाद कर दिया था।

मारे भय के ज़मींदार का लहू पूरी तरह सूख रहा था। वह कांप जा रहा था, और कांपते-कांपते ही कभी घोड़े की लगाम खींचता, कभी उसके अयाल को सहलाता और कभी उसे "भीम! भीम! " कह कर रुकने को कहता।

लीमन उस समय अपने खेत में था। वह ज़मींदार की हालत समझ गया था। उसने फौरन दौड़कर अपने को एक झाड़ी के पीछे छिपा लिया, और घोड़े की नकल करते हुए ज़ोर-जोर से हिनहिनाने लगा। ताज्जुब, दूसरे घोड़े का हिनहिनाना सुनकर ज़मींदार का घोड़ा

फौरन रुक गया और फिर उधर-उधर देखते हुए भीम नामक वह अडियल घोड़ा भी हिनहिनाने लगा।

अब ज़मींदार की जान में जान आयी। वह तुरंत अपने घोड़े पर से उतरा और यह जानने की कोशिश करने लगा कि दूसरे घोड़े की यह आवाज कहां से आयी है। वहां पास में और कोई घोड़ा तो था नहीं। इतने में गांव के लोग भी वहां पहुंच गये और उनके पीछे-पीछे लीमन भी चला आया।

ज़मींदार को पता चल गया था कि वह आवाज़ लीमन ने ही निकाली थी। वह कौतूहल से उसकी ओर देखने लगा। अब तक सोमू भी वहां पहुंच गया था। वह बोला, "हुजूर, घोड़े की आवाज करने वाला यह लीमन मेरा बेटा है। हर वक्त निठल्ला रहता है। निठल्लेपन में पशु-पक्षियों की आवाजें निकालता रहता है।"

जमींदार को सोमू की बात सुनकर और भी हैरानी हुई। बोला, "ये निठल्लेपन की आवाजें नहीं। इन आवाजों में बड़ा दम है। इसी एक आवाज ने आज मेरी जान बचायी है। ऐसी आवाजें हर कोई नहीं निकाल सकता। यह तो एक बहुत बड़ी कला है। तुम्हारा बेटा बहुत गुणी है। मैं उससे बहुत खुश हूं। मैं उस पोखर के किनारे से लेकर इधर इस झरने तक, सारी जमीन, तुम्हारे बेटे के नाम कर रहा हूं। ये तमाम खेत अब उसी के हैं। हां, उसे इस कला को और आगे बढ़ाना चाहिए, बीच में ही नहीं छोड़ देना चाहिए। अगले वर्ष दशहरे पर मैं फिर आऊंगा। तब मैं शायद हाथी पर आऊं...।"

ज़मींदार की बात सुनकर सब हंस दिये। पर लीमन ने उसकी बात गिरह बांध ली। वह पशुपक्षियों की आवाजें निकालने में बेजोड़ हो गया और इस तरह उसकी कला चरम पर पहुंच गयी। पर उसने यह कला अपने तक ही सीमित न रखी-दूसरों को भी सिखानी शुरू कर दी। बाद में गौतमपुर में इस कला की प्रतियोगिता का आयोजन भी होने लगा, और इस कला के प्रेमी अपने को एक खास नाम से पुकारने लगे।

हमारे देवगण

बुद्ध

बुद्ध का जन्म राजकुमार गौतम के रूप में कपिलवस्तु के राज-घराने में हुआ था। कपिलवस्तु राज्य आज के उत्तर प्रदेश और नेपाल के सीमांत पर था।

राजकुमार गौतम ने संसार का त्याग कर दिया और खूब तपस्या की। तपस्या में तपकर वह बुद्ध या उद्दीप्त या प्रकाशयुक्त हो गये। वह ई. पू. ५६६ से ई. पू. ४८६ तक, यानी ८० वर्षों तक जीवित रहे।

उनका कहना था कि मनुष्य इसलिए कष्ट उठाता है, क्योंकि वह इच्छा करता है। इच्छाओं पर यदि काबू पा लिया जाये तो कष्टों तथा जन्मों के फेरे से छुटकारा पाया जा सकता है। यही उनकी शिक्षा थी।

उनकी शिक्षा बहुत ही लोकप्रिय हुई और दूर-दूर तक फैलती गयी। हिंदुओं ने तो उन्हें विष्णु के दस अवतारों में से एक मान लिया।

आज बौद्ध मत संसार की जनसंख्या के एक-तिहाई भाग ने अपना रखा है।

भारत का सब से छोटा खिलाड़ी

पिछले वर्ष जुलाई के महीने में कलकत्ता के एक सार्वजनिक समारोह में एक आठ-वर्षीय बालक का अभिनंदन किया गया। यह बालक कौन था?

और कोई नहीं, सूर्यशेखर गांगुली था जिसने जुलाई के पहले पखवाड़े में पोलैंड के वार्सा में वर्ल्ड सब-जूनियर चैस चैंपियनशिप के लिए कांस्य पदक जीता था। "राउंड पूरे होने पर सूर्यशखर ने ८ प्वाएंट बनाये थे। स्वर्ण पदक फ्रांस के लेरोस आंद्रिया को मिला जिसने ८.५ प्वाएंट बनाये। रजत पदक पाको वैलेका को मिला जिसने सूर्यशेखर की तरह ८ प्वाएंट ही बनाये, पर वैसे खेला बेहतर।

टूर्नामेंट के दूसरे दिन विश्व चैंपियन गैरी कैस्परोव सूर्यशेखर के पीछे खड़ा, इस "नन्हें उस्ताद" को १६ पारियों में अपने प्रतिद्वंद्वी का सफाया करते देख रहा था। कैस्परोव के प्रशिक्षक, एड्डी गुफेल्ड ने बाद में भविष्यवाणी की: "यह बालक अगले १०-१२ वर्ष में विश्व खिताब के लिए खेलेगा।"

सूर्यशेखर स्कॉटिश चर्च कालिजियेट स्कूल के तीसरे दर्जे में पढ़ता है। इसके पिता का नाम है पंकज गांगुली और मां का नाम है आरती। पंकज गांगुली पेशेवर ज्योतिषी है और उसका विश्वास है कि उसके बेटे पर छः ग्रहों की कृपादृष्टि है। उसने अपने बेटे को दो अंगूठियां पहना रखी हैं। एक में मोती जड़ा है और दूसरी में नीलम। मां की तरफ से सूर्यशेखर के बड़े-बुज़ुर्ग सब शतरंज के खिलाड़ी हैं। उसे दीक्षा भी उसके नाना, अनिल बसु मलिक, से मिली थी। तब वह तीन वर्ष का ही था। पांच वर्ष का होते-होते उसने पहला सरकारी मैच खेला। अब तक का उसका रिकार्ड इस प्रकार है: ३७ राष्ट्रीय स्तर की प्रतियोगिताएं, २७ राज्यस्तर के मुकाबले तथा दो अखिल भारतीय ओपन टूर्नामेंट। पहला अंतर्राष्ट्रीय मुकाबला उसने वार्सा में ही किया।

सूर्यशेखर का कद चार फुट दो इंच है। वह फुटबाल और क्रिकेट खेलना भी पसंद करता है। इस समय वह कोई भी खेल खेलने वाला सबसे छोटा खिलाड़ी है। उसे गणित भी पसंद है, लेकिन उसकी मनपसंद उसकी बाइबल-कक्षा है। वह बाइबल को कहानी की किताब की तरह पढ़ता है। स्मरणशक्ति भी उसकी अच्छी है। हिसाब-किताब भी फटाफट करता है और नयी-नयी तरकीबें भी सोचता रहता है। उसे "एक बहुत ही तेज पैंतरेबाज़" कहा गया है "जो कंप्यूटर की गति से काम करता है"।

इससे पहले हमारे यहां जूनियर चैंपियनों में दिव्येंदु बरुआ (१९७८) तथा विश्वनाथन आनंद (१९८७) हो चुके हैं। यह बालक भी उन्हीं की परंपरा में है।

क्या तुम जानते हो?

१. किस देश में चाय पहले पहल बोयी गयी थी?
२. कौन-सा पदार्थ भारी है-दूध या मलाई?
३. इस्लाम के "पांच स्तंभ" कौन से हैं?
४. कुरान शरीफ में हज़रत ईसा का ज़िक्र किस तरह आता है?
५. क्राइस्ट (ईसा) नाम कहां से लिया गया?
६. ईसा का बपतिस्मा (नामकरण) एक नदी के जल में हुआ था। वह नदी कौन सी थी?
७. बैथलेहम का अर्थ क्या है?
८. अंतरिक्ष में भेजे जाने वाले पहले रूसी उपग्रह का नाम क्या था? इसे कब अंतरिक्ष में भेजा गया?
९. सब से ज़्यादा सिक्सर मारने वाला क्रिकेट खिलाड़ी कौन है? किसका रिकार्ड उसने तोड़ा?
१०. किस युद्ध में ज़हरीली गैस पहली बार छोड़ी गयी?
११. संगीत का 'अभिभावक संत' किसे कहा जाता है?
१२. कैसी कलम के साथ स्याही पहले पहल इस्तेमाल की गयी?
१३. एशिया में सबसे बड़ा रेगिस्तान कौन-सा है?
१४. क्रिस्टोफर कोलंबस किस देश का था?
१५. किस देश ने सबसे पहले कागज़ के नोट चलाये?

उत्तर

१. चीन
२. दूध
३. आस्था, दैनिक प्रार्थना, दान, रमज़ान के महीने में व्रत, मक्का का हज।
४. ईसा
५. यूनानी शब्द "क्रिस्टो"। इसका अर्थ है "जिसे पवित्र किया गया हो"।
६. इज़राइल में जोर्डन नदी।
७. ईश्वर का घर या अन्न-गृह। बैथलेहम में हज़रत ईसा का जन्म हुआ था।
८. स्पुतनिक। इसे अंतरिक्ष में ४ अक्तूबर, १९५७ को भेजा गया था।
९. सोमरसैट के लिए इआन बोथम ने। उसने १९८५ में ८० सिक्सर मारे। इससे पहले आर्थर वैलार्ड ने १९३५ में ६६ सिक्सर मारकर अपना कीर्तिमान स्थापित किया था।
१०. पहले विश्व युद्ध (१९१४-१८) में वाइप्रेस के पहले युद्ध में।
११. सेंट सेसिलिया।
१२. पक्षी का पर।
१३. अरब का रेगिस्तान।
१४. इटली
१५. चीन

एवरेस्ट पर गुब्बारे

पहली बार दो गरम हवा के गुब्बारे एवरेस्ट पर्वत के ऊपर उड़े और अक्तूबर के तीसरे सप्ताह में तिब्बत में आराम से उतरे। इन्हें नेपाल से छोड़ा गया था। इस उड़ान को एक घंटे से कुछ ज़्यादा समय लगा। एक गुब्बारे में एक आस्ट्रेलियाई और एक ब्रिटेन का उड़ाकू था और दूसरे में दो ब्रिटेन के उड़ाकू थे। इस उड़ान का आयोजन ऑस्ट्रेलिया–ब्रिटिश एवरेस्ट वैलून एक्सपीडीशन ने संयुक्त रूप से किया था। ये गुब्बारे एवरेस्ट की ८,८४८ मीटर ऊंची चोटी के ३०० मीटर और ऊपर उड़े। नेपाल ने इस चोटी को अब माउंट सागरमथा का नाम दे दिया है।

अपने आप में यह एक ऐतिहासिक घटना थी।

चंदामामा की खबरें

पहले कोई अनुभव नहीं था

२३ वर्षीय पैटी शार्प ६२-वर्षीय पिता के साथ एक दो-सीट वाले जहाज़ में उड़ान ले रही थी। वह पीछे बैठी थी और पिता जहाज़ उड़ा रहे थे। यह पिप्पर कब एकल-इंजन जहाज़ अमरीका के ओरेगोन से दृश्य देखने और फोटो लेने के लिए उड़ा था।

पैटी अपने पिता से बातें कर रही थी। एकाएक उसने ग़ौर किया कि उसके पिता जहाज़ उड़ाते-उड़ाते अपनी सीट में ढेर हो गये हैं। वह घबरा गयी। पिता को दिल का दौरा पड़ा था। उसने फौरन आगे झुककर बटनों और स्विचों को अपने नियंत्रण में ले लिया और एक छोटी सी हवाई पट्टी पर जहाज को सुरक्षित नीचे ले आयी।

इससे पहले उसने कभी जहाज़ नहीं उड़ाया था।

हार-जीत

सोमनाथ शास्त्री एक महानू संगीतज्ञ था। जिस सभा-समारोह में उसका गान होता, श्रोतागण मुग्ध हो जाते।

सोमनाथ शास्त्री का राज-दरबार में भी संगीत-कार्यक्रम चला। हर कोई मंत्रमुग्ध था। राजा पर तो उसका जादू-का सा असर हुआ। उन्होंने अपने गले की माला उतारकर सोमनाथ शास्त्री को पुरस्कार-स्वरूप भेंट दी, और साथ-साथ उसे संगीताचार्य के पद से भी सम्मानित किया।

सोमनाथ शास्त्री की दक्षता की खबर रानी मैथिलीदेवी तक भी पहुंची। उसे भी संगीत बहुत प्रिय था। उसने एक दिन राजा से निवेदन किया कि उसके कक्ष में सोमनाथ शास्त्री के गायन का आयोजन किया जाये। राजा ने उसकी बात मान ली और अगले दिन ही उस कार्यक्रम का आयोजन हो गया।

सोमनाथ शास्त्री का गायन शुरू हुआ। रानी ने उन कृतियों और रागों पर अपना एतराज़ जताया। सोमनाथ शास्त्री को वह एतराज़ बडा अपमानजनक और आपत्तिजनक लगा।

"कैसा संगीतज्ञ है यह। आपने इसे अपने दरबार में संगीताचार्य का पद देकर इसे विशेष रूप से, सम्मानित भी किया। मेरी राय में तो यह कोई संगीतज्ञ नहीं है।" इन शब्दों के साथ रानी ने उस संगीतज्ञ की ही भर्त्सना नहीं की, राजा की भी कर डाली।

संगीत में अपनी गति के बारे में रानी का कटाक्ष सुनकर सोमनाथ शास्त्री पहले तो विचलित हुआ, फिर विनम्र स्वर में बोला, "क्षमा कीजिए, महारानी जी। मैं यह मानने को तैयार नहीं हूं कि मेरे संगीत में कोई कमी है। लेकिन मैं यह भी समझ गया हूं कि मैं अपने संगीत से आपको संतुष्ट नहीं

लक्ष्मीविद्या

ही उसे वह पहले जैसा संतोष प्राप्त हो सकता था । उसे अब ऐसे लगने लगा जैसे कि राजाश्रय केतकी के पौधे के समान है । उस पौधे में सुगंध तो होती है, पर ज़हरीले सांपों का भी वहां डेरा रहता है । फिर भी उसने अपने दुःख और आक्रोश को दबाये रखा, और राजा से बोला, "राजन्, मैं जानना चाहता हूं कि महारानी जी को किस प्रकार का संगीत पसंद है?"

अब रानी स्वयं ही बोली, "शास्त्री जी, यदि संभव हो तो मुझे कुछ ऐसे लोकगीत सुनाइए जिन में राग-रागनियां और शात्रीयता कुछ न हो ।"

"मुझे एक सप्ताह की मोहलत दीजिए , महारानी जी," सोमनाथ शास्त्री बोला, "मैं कोशिश करूंगा कि आपकी पसंद के लोकगीत आपको सुना सकूं ।"

रानी ने स्वीकृति दे दी । इस पर राजा ने भी अपनी सहमति जता दी ।

ठीक एक सप्ताह बाद सोमनाथ शास्त्री ने अंतःपुर में अपने संगीत कार्यक्रम का फिर आयोजन करवाया । अब वह शास्त्रीय संगीत नहीं, लोक गीत सुना रहा था । उन गीतों में बहुत ही रस था । रानी उन्हें सुनकर विभोर हो गयी । वह बराबर तालियां बजाये जा रही थी ।

सोमनाथ शास्त्री को अब पता चल गया था कि रानी को संगीस का कितना ज्ञान है । उधर राजा श्रवणवर्मा ने सोमनाथ शास्त्री की जमकर प्रशंसा की, और बोले,

कर सका । इसलिए मैं महाराजा से प्रार्थना करूंगा कि वह मुझे संगीताचार्य के पद से मुक्त कर दें ।"

सोमनाथ शास्त्री ने अपनी बात अभी पूरी की ही थी कि राजा श्रवणवर्मा बोल पड़े, "आपको दरबार छोड़कर जाने को किसने कहा है? हां, महारानी जिस तरह का संगीत सुनना चाहती हैं, आप वैसा ही सुना दें । दरबार छोड़कर जाना आपके अधिकार में नहीं ।"

सोमनाथ शास्त्री को पहली बार अपने जीवन में पश्चात्ताप का अनुभव हुआ । उसकी आजादी छिन चुकी थी । वह अब आम जनता के बीच बैठकर अपनी संगीत सभाएं भी नहीं चला सकता था, और न

"शास्त्री जी, समझ गये न अब आप कि महारानी जी को कैसा संगीत पसंद है। अब आप हमें ऐसा ही संगीत सुनाया करें। हम तो आपका लोहा पहले ही मान चुके थे। अब आपने यह प्रमाणित कर दिया कि आप लोक संगीत और शास्त्रीय संगीत में समान रूप से पारंगत हैं।"

सोमनाथ शास्त्री क्या कहता? वह मौन रहा और केवल अपना सर हिलाता रहा।

अभी एक पखवाड़ा भी न बीता था कि राजा श्रवणवर्मा के दरबार में पड़ोसी राज्य का एक संगीतज्ञ आया और अपनी डींग मारते हुए बोला, "राजन्, मैंने शास्त्रीय संगीत की कई प्रतियोगिताओं में हिस्सा लिया है और हर प्रतियोगिता में मैं विजयी रहा हूं। सभी संगीतज्ञों ने मेरी जीत स्वीकार की है और अपने स्वर्ण कंकण और तोड़े मुझे पहनाये हैं। मैं चाहता हूं कि आपके यहां भी एक प्रतियोगिता हो। अगर किसी ने मुझे हरा दिया तो मैं हमेशा के लिए उसका दास हो जाऊंगा और मेरे ये सब कंकण और तोडे उसी के हो जायेंगे। यादि मुझे हराया न जा सका तो आपको मेरा यथोचित सत्कार करना होगा।"

एक अतिथि-संगीतज्ञ के मुंह से ऐसी बातें सुनना श्रवणवर्मा को अपमानजनक लगा। सोमनाथ शास्त्री भी उस समय वहीं था। राजा ने उसकी ओर देखा और जानना चाहा कि उसकी क्या राय है। यह प्रतिस्पर्धा तो शास्त्रीय संगीत में होगी, जबकि उनका आदेश था कि भविष्य में उनके दरबार में केवल लोकगीत ही गाये जायें। एक बार

तो सोमनाथ शास्त्री को गुस्सा आ गया, पर अपने राज्य की प्रतिष्ठा का सवाल भी था । वह दांव पर लगी हुई थी । इसलिए उसने हां कर दी और प्रतिस्पर्धा के लिए तैयारियां शुरू हो गयीं ।

प्रतिस्पर्धा काफी जोरदार ढंग से चली । शास्त्रीय संगीत का वास्तविक माधुर्य क्या होता है, इसका प्रत्यक्ष ज्ञान राजा श्रवणवर्मा को उसी दिन हुआ । सभी दरबारी आनंद से झूम रहे थे ।

पड़ोसी राज्य के संगीतज्ञ ने थोड़ी देर बाद ही अपनी पराजय स्वीकार कर ली । उसने अपने सभी कंकण और तोड़े सोमनाथ शास्त्री के सामने रख दिये और अपना माथा नवाते हुए बोला, "मैं अब आपका दास हूं । जीत आपकी हुई है । आप मुझे जो आदेश देंगे, वह मुझे शिरोधार्य होगा । आपने मेरा दर्प तोड़ दिया है ।" और इन्हीं शब्दों के साथ वह संगीतज्ञ जैसे आया था, वैसे ही चलता बना ।

राजा श्रवणवर्मा ने सोमनाथ शास्त्री का खूब सम्मान किया और दरबारियों ने भी उसकी दिल खोलकर प्रशंसा की ।

राजा गदगद हो रहे थे । उन्होंने सोमनाथ शास्त्री के हाथ अपने हाथों में ले लिये और बोले, "शास्त्री जी, आप वास्तव में महान् हैं । अब जब भी आप सुनायेंगे, शास्त्रीय संगीत ही सुनायेंगे । लोकगीत सुनाने वाली बात अब हमेशा के लिए भूल जाइए ।"

लेकिन सोमनाथ शास्त्री को इस जीत पर कोई खुशी न थी । उसे वे सब बातें याद आ रही थीं जो रानी ने उसकी कला के बारे में कही थीं । उस समय उसकी कला को बिलकुल अधम करार दिया गया था । उसका मन अशांत था ।

दूसरे दिन अभी सुबह हुई भी नहीं थी कि सोमनाथ शास्त्री बिना किसी को कुछ बताये राज दरबार से चला गया था । उसने किसी से अनुमति लेने की जरूरत भी न समझी । वह शायद राज्य की सीमाएं भी लांघ चुका था ।

किसी को कुछ पता नहीं था कि सोमनाथ शास्त्री ने ऐसा निर्णय क्यों लिया ।

सासजी का इलाज

सुमति को ससुराल में आये अभी एक ही सप्ताह हुआ था कि उसे वहां की चाल-ढाल समझ में आ गया । उसने जान लिया कि इस घर में केवल उसकी सास की ही चलती है, ससुर महोदय तो बस नाम के ही हैं ।

एक दिन सुमति की ननद, राधा, एक थाली में खाना रखकर कहीं ले जा रही थी । सुमति ने पूछ ही लिया, ''यह खाना कहां लिये जा रही हो, राधा?''

राधा ने कहा, ''दादी के लिए, भाभी ।''

''दादी?'' सुमति को बड़ी हैरानी हुई । पूछा, ''क्या वह अभी ज़िंदा है?''

''हां, बिलकुल ज़िंदा है, ''तुम देखना चाहती हो तो आओ मेरे साथ ।'' राधा बोली ।

सुमति चुपचाप राधा के साथ चल दी । गांव के बाहर उनका पशुबाड़ा था । वे उसी बाड़े के भीतर चली गयीं । चारों तरफ गोबर की बदबू थी । वहीं, एक कोने में, एक टूटी खटिया पर राधा की दादी पड़ी खांस रही थी । राधा बोली, ''यही है हमारी दादी ।''

उस बुढ़िया की हालत देखकर सुमति की आंखों में आंसू आ गये । बुढ़िया की नज़र जब राधा पर पड़ी तो उसने अपनी खटिया के नीचे से एक गंदा-सा मिट्टी का बर्तन निकाला और राधा ने उसमें थाली का खाना उड़ेल दिया । सुमति से रहा न गया । वह बुढ़िया के निकट गयी और उसके पांवों पर झुकते हुए उसने उसे प्रणाम किया ।

बुढ़िया ने सुमति की ओर बड़े आश्चर्य से देखा । फिर बोली, ''तुम मेरे पोते सुरेश की बहू हो?''

सुमति ने ''हां'' में सर हिला दिया । इस पर बुढ़िया ने उसे उसके और निकट आने को कहा और फिर उसके सर पर हाथ फिराते हुए बोली, ''बेटी, अब तुम्हें ही सुरेश का ख्याल रखना है ।''

अमिता चौधरी

इतने में राधा बोल पड़ी, "भाभी, हमें यहां से जल्दी चलना होगा । मां को पता चल गया तो आफत कर देगी ।"

सुमति फौरन उसके साथ वापस चलने के लिए तैयार हो गयी । रास्ते में उसने राधा से पूछा, "दादी को वहां पशुबाड़े में क्यों रखा जाता है?"

"दादी को छूत की कोई ज़बरदस्त बीमारी है । हमारे बीच रहेगी तो हमें भी वह बीमारी लग सकती है । इसीलिए मां ने दादी को यहीं पशुबाड़े में रखा है ।" राधा ने कहा ।

इस घटना के दूसरे ही दिन मनोरमा, यानी सुमति की सास, को खबर मिली कि उसकी मां सख्त बीमार है और मायके जाते समय वह घर की चाभियां सुमति के ज़िम्मे कर गयी ।

इसी बीच सुमति का बड़ा भाई, सुदर्शन, सुमति को देखने चला आया जो नामी हैद्य था । सुमति ने बूढ़ी दादी की कथा सुनायी और इलाज के लिए उसकी सलाह मांगी ।

सुदर्शन ने उस बुढ़िया की जांच की और बोला, "इसे तो कोई रोग नहीं । दवा देने से बहुत जल्द ठीक हो जायेगी । पर हां, इसे पशुओं के इस बाड़े से बाहर निकालो और अच्छे वातावरण में रखो ।"

सुमति ने सारी बात अपने पति को समझायी और फिर वे उसे घर ले आये । घर पर उसकी ठीक से देखभाल की गयी और आवश्यक दवाएं भी दी गयीं । देखते ही देखते बुढ़िया भली-चंगी हो गयी ।

सुदर्शन जब लौट रहा था तो वह अपनी बहन को दो गोलियां भी देता गया और उसे बताता गया कि कैसे वह अपनी सास को पाठ पढ़ा सकती है ।

मनोरमा जब वापस आयी तो वह बुढ़िया को घर में देखकर जल-भुन गयी और चिल्लाती हुई बोली, "इस बुढ़िया को यहां कौन लाया है? इसे छूत की बीमारी है ।"

सुमति ने पहले सास का गुस्सा ठंडा हो जाने दिया । फिर बोली, "मेरे बड़े भाई साहब जाने-माने वैद्य हैं । वह यहां आये थे । उन्होंने दादी जी का इलाज किया । यह बिलकुल ठीक हो गयीं । इसलिए हम इन्हें घर ले आये ।"

मनोरमा को लगा कि अब उसकी नहीं

चलेगी । इसलिए वह चुप लगा गयी । दूसरे दिन सुमति ने अपने बड़े भाई के कहे अनुसार दो गोलियों में से एक गोली पानी में घोलकर अपनी सास को पिला दी । दो दिन में ही मनोरमा खांसी से बेहाल हो गयी ।

सुमति को तो, बस, बहाना ही चाहिए था । वह अब ज़ोर-ज़ोर से चीखने-चिल्लाने लगी, "अरे, देखो, यह कैसे खांस रही है । ज़रूर इन्हें कोई और ही रोग है । मेरे होने वाले बच्चे पर इसका असर हो गया तो?"

सुमति की तरकीब काम कर गयी । दादी की जगह अब मनोरमा उसी पशुबाड़े में उसी खटिया पर पड़ी थी । राधा पहले की तरह ही खाना पहुंचाने का काम कर रही थी ।

आखिर, एक दिन मनोरमा ने अपनी बेटी राधा से कहा, "बेटी, मैं यहां नहीं रह सकती । तुम मुझे घर ले चलो ।"

"दादी के बीमार होने पर उसे भी यहीं रखा गया था । अब तुम्हें भी यहीं रहना होगा । उसे भी छूत की बीमारी थी, तुम्हें भी छूत की बीमारी है ।" राधा ने कहा ।

उस दिन इत्तफाक से मनोरमा का पति, बलराम, भी वहीं मौजूद था । वह बोला, "अब तुम्हारा अपने किये को भुगतने का समय आ गया है । तुम्हें किसी प्रकार का गुस्सा करने का कोई हक नहीं । बच्चे बड़ों से ही सीखते हैं । तुम से सीखी इस विद्या का उपयोग अगर तुम्हारी बेटी कल अपने ससुराल में करे तो कोई हैरानी की बात न होती । तुमने अपनी सास से जो बरताव किया, तुम्हारी बहू ने वह बहुत ही जल्द तुमसे सीख लिया । जैसी इज्ज़त तुम अपनी सास को देती रही, वैसी ही इज्ज़त अब तुम्हें अपनी बहू से मिल रही है । इसमें तुम्हारी बहू की कोई गलती नहीं है । यह तो जैसे को तैसा है । इस मामले में न मैं कुछ कर सकता हूं, न ही तुम्हारा बेटा । हम लाचार हैं ।" और इतना कहकर बलराम वहां से चलता बना ।

तीन दिन ऐसे ही बीत गये । मनोरमा पशुबाड़े में वैसे ही पड़ी थी । उसने न पानी लिया, न कुछ खाया । इससे वह काफी कमज़ोर पड़ गयी । लगभग मूर्च्छा की अवस्था में पहुंच गयी । चारों तरफ बदबू ही बदबू थी । ऐसे वातावरण में उसके लिए

सांस लेना भी दुश्वार हो रहा था। उसे अब पता चला कि पशुबाड़े में रहने का मतलब क्या होता है, और उसने अपनी सास को कितनी तकलीफ दी थी। वह अब अपने घटिया व्यवहार पर बहुत दुःखी थी। उसे अपने किये पर शर्म आ रही थी। पश्चात्ताप की आग उसके भीतर सुलग रही थी।

चौथे दिन उसे लिवाने उसका बेटा और बहू आये। मनोरमा गुस्से में थी। एकदम से भड़कर कर बोली, "मुझे नहीं जाना अब कहीं भी। मैं अब यहीं मरूंगी।"

मां की बात सुनकर सुरेश बोला, "अगर तुम यहीं रहना चाहती हो तो हमें कोई एतराज़ नहीं। लेकिन जब से तुम यहां आयी हो, दादी ने खाना-पीना छोड़ दिया है। वह तुम्हें लेकर हर वक्त चिंता में पड़ी रहती है। उसे यही ग़म खाये जा रहा है कि इस बदबू में तुम कैसे रहती होगी। वह हर वक्त खाट पर ही पड़ी रहती है। यदि हम तुम्हें घर वापस न ले जा पाये, तो हो सकता है दादी हमेशा के लिए आंखें मूंद ले।"

यह सुनते ही मनोरमा की आंखों में आंसू आ गये। उसे इस बात पर दुःख हो रहा था कि इतनी अच्छी सास को उसने इतना तंग किया। वह अब उद्विग्न हो उठी। उसकी समझ में अब आया कि दूसरों के प्रति सौहार्द और स्नेह किस तरह दुगुना होकर वापस आता है।

मनोरमा अब घर लौट आयी थी। घर में जैसे ही उसने पांव रखा, उसने सबसे पहले अपनी सास से माफी मांगी। बहू को घर वापस आया देख सास ने संतोष की सांस ली और उस दिन उसने जी भरकर खाना खाया।

जल्दी ही सुमति ने जान लिया कि उसकी सास की पहले वाली बीमारी समूल नष्ट हो गयी है। इसलिए उसने अब उसे दूसरी गोली, पहले की तरह ही पानी में घोलकर, पिला दी। गोली वाले घोल का उसके भीतर जाना था कि वह तंदुरुस्त होती गयी और इधर-उधर के कामों में खूब व्यस्त दीख पड़ने लगी।
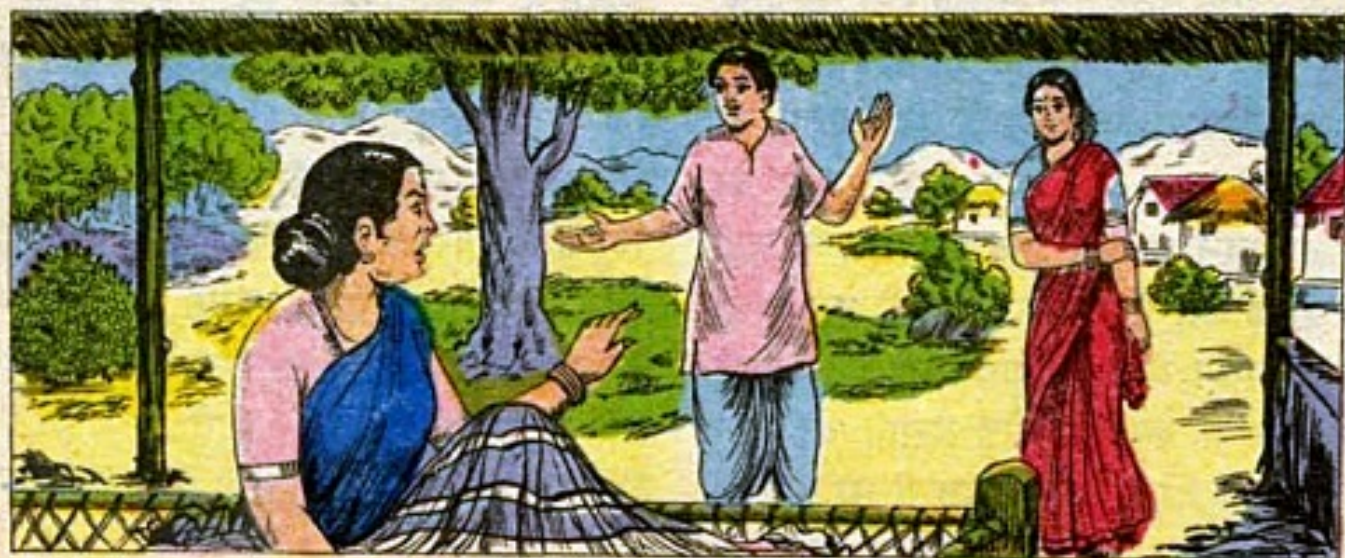
सब राक्षस जब बारी-बारी से डींग मार चुके तो अंत में विभीषण उठा और रावण को प्रणाम करते हुए बोला, "बुजुर्गों का कहना है जब साम-दान-भेद से काम न चले तो दंड का उपयोग करना चाहिए। पर यहां आपका मुकाबला राम से है। यहां दंड भी काम नहीं देगा, क्योंकि राम की शक्ति अपार है। उसके बल का अनुमान लगाना बहुत मुश्किल है। अकेले हनुमान को ही लीजिए। वह न केवल समुद्र पार करके यहां आया, बल्कि उसने वह उत्पात मचाया जिसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। मुझे लगता है उस पर राम की विशेष कृपा है। राम ने जब खर आदि राक्षसों को मारा, तो आप प्रतिकार-स्वरूप सीता को उठा लाये। यह सरासर अनुचित था। राम ने राक्षसों को तभी मारा जब उन्होंने उसे क्षति पहुंचाने की कोशिश की। इसलिए राम ने जो कुछ किया, आत्मरक्षा के लिए किया। हम उसके इस क्रिया-कलाप के लिए उसे दोषी नहीं ठहरा सकते। पर सीता को लंका में लाकर हमने यहां स्वयं खतरे का बीज बोया है। हमने स्वयं विपत्ति को आमंत्रण दिया है। हमें चाहिए कि हम अविलंब सीता को राम के पास पहुंचा दें। राम के पराक्रम की कोई सीमा नहीं। ऐसे पराक्रमी से यों ही शत्रुता बढ़ाना हमारे हित में नहीं। इससे पहले कि राम लंका पर हमला कर दें, हमें सीता को उसे लौटा देना चाहिए, वरना लंका के

१९. शरणागत विभीषण

लिए खतरा ही खतरा है । मैं जो कह रहा हूं, तथ्यों के आधार पर कह रहा हूं । यह शतप्रतिशत सच है । क्रोध—सुख और धर्म का विनाशक है । इससे हानि ही हानि होगी । इसलिए मेरी बात मान लीजिए और सुख-चैन से रह रही प्रजा के लिए अशांति मत बुलाइए ।"

विभीषण की सलाह रावण को पसंद नहीं आयी । उसका गुस्सा और भड़क उठा, "तुम मुझे भयभीत करना चाहते हो? याद रखो, रावण को भयभीत करने वाला अभी पैदा ही नहीं हुआ । और यह भी याद रखो कि राम मुझसे सीता वापस नहीं ले जा पायेगा ।"

रावण का मंत्रणा लेना दूसरे दिन भी जारी रहा । वह युद्ध के बारे में अपने मंत्रियों से विचार-विमर्श करने के लिए रत्नों से जड़े अपने सोने के रथ में बैठकर मंत्रणा-गृह में आया था । प्रहस्त की तरफ देखकर रावण बोला, "सेनाध्यक्ष, नगर की सुरक्षा और कड़ी होनी चाहिए । इसलिए अच्छे से अच्छे योद्धा वहां तैनात करो ।"

प्रहस्त ने उसी समय रावण की आज्ञा का पालन किया और उसी समय आवश्यक आदेश जारी कर दिये ।

अब रावण ने सभा को संबोधित करते हुए कहा, "तुममें भला-बुरा समझने की शक्ति है । मैं जो कहने जा रहा हूं, उससे कुंभकरण को छोड़कर तुम सब लोग परिचित थे । कुंभकरण पिछले छः महीनों से नींद में पड़ा था । वह यहां अभी आया है । मैं दण्डकारण्य से राम की पत्नी सीता को उठा लाया था । सीता जैसी सुंदर स्त्री तीनों लोकों में ढूंढ़ने से नहीं मिलेगी । शायद वह यह आशा बांधे बैठ हो कि राम आकर उसे बचा लेगा । लेकिन सागर पार करना कोई आसान काम नहीं । और यदि सागर पार करके वह किसी तरह यहां आ भी गया तो उसका सही-सलामत बचकर लौटना संभव नहीं । फिर भी हमें यह सोचना है कि यदि वह यहां आ भी पहुंचता है तो हमें क्या करना होगा । यही हमारा आज का विचारणीय विषय है ।"

रावण के मुंह से ऐसी बातें सुनकर कुंभकरण एकदम गुस्सा खा गया । वह रावण से बोला, "जब तुमने राम की पत्नी का अपहरण किया था, तब क्या तुमने हमसे

मंत्रणा ली थी? तब अब किस बात की उतावली दिखा रहे हो? अब हमारी मंत्रणा की तुम्हें क्या जरूरत पड़ गयी? तुम्हारी तो वह बात है कि आग लगने पर कुआं खोदो। तुम जब सीता को उठाकर ला रहे थे, तब तुमने यह नहीं सोचा कि तुम हम सब को, अपनी प्रजा को, किस संकट में झोंक रहे हो? खैर मनाओ कि राम ने अब तक तुम्हारा काम तमाम नहीं किया। उसके हाथ लग जाते तो तुम्हारा जिंदा रह पाना असंभव था। पर अब तुम चिंता मत करो। मैं जग गया हूं। तुम्हारे शत्रुओं का अंत भी करूंगा। तुम अब हर प्रकार की चिंता त्याग दो।"

कुंभकरण की अपने लिए ऐसी अपमानजनक भाषा, रावण सह नहीं सका। उसका गुस्सा उफान खाने लगा। पर महापार्श्व ने उसे किसी तरह शांत किया। बोला, "आप सीता को लेकर परेशान क्यों हो रहे हैं? कुंभकरण और इंद्रजित के रहते आपको पूरी तरह आश्वस्त रहना चाहिए।"

महापार्श्व की चिकनी-चुपड़ी में रावण आ गया। बोला, "अब मैं एक रहस्य आप लोगों को बताने जा रहा हूं। पिछले दिनों पुंजिकस्थला नाम की एक अप्सरा से मेरी भेंट हुई। वह ब्रह्मदेव के यहां जा रही थी। मैं अपनी सब शिष्टता भूल गया और मैंने उसके साथ अनुचित व्यवहार किया। शायद यह बात उस अप्सरा ने भगवान ब्रह्मा को बता दी। उन्होंने मुझे चेतावनी दी कि यदि मैंने किसी स्त्री के साथ बलात्कार किया तो मेरा सर फटकर दो टुकड़े हो जायेगा। राम को मेरे वेग और गति का अनुमान नहीं। वह मुझ से लड़ने आ रहा है। उसने अपनी मृत्यु स्वयं बुलायी है। उस अज्ञानी को वास्तविकता का पता नहीं।"

कुंभकरण और रावण की लंबी-चौड़ी सुनने के बाद विभीषण से रहा नहीं गया। वह फिर बोला, "हे राक्षसराज, तुमने सीता के प्रति ऐसी आसक्ति क्यों दिखायी? वह तो एक महासर्प है। उसके वक्ष में सांप का फन है। चिंता उसका विष है। मंदहास उसकी दाढ़ें हैं। उसके हाथों की अंगुलियां सांपों के सर हैं। इसलिए हमारी भलाई इसी में है कि वानर-योद्धाओं के यहां पहुंचने से

पहले ही उसे लौटा दें ।"

प्रहस्त को विभीषण की बातें कड़वी लगीं । उसने कहा, "रावण का मुकाबला करने की शक्ति किसी के पास नहीं ।"

इस पर इंद्रजित भी बोल पड़ा, "ऐसा कायर तो हमने कभी नहीं देखा ।" रावण बोला, "ऐसा कायर तो समूचे पुलस्त्य वंश में नहीं होगा । ऐसा अपराक्रमी भी किसी ने देखा है? अरे, राम या लक्ष्मण जैसे साधारण मानवों को मारना भी कोई वीरता है? फिर तुम किसलिए इतने भयभीत हो रहे हो? मैंने इंद्र को पराजित किया, देवताओं को धूल चटवायी । तब क्या ये राम और लक्ष्मण ही मेरे लिए भारी रहेंगे?"

"मैं तुम से विनती करता हूं, मेरे भाई । तुम्हारे इन कृत्यों का राक्षस वंश पर बहुत बुरा असर पड़ेगा । राम के बाणों के सामने किसी का टिक पाना संभव नहीं । इसलिए अब भी सीता को लौटा दो । इसी में हमारी भलाई है ।" विभीषण ने फिर कहा ।

विभीषण की मंत्रणा रावण की बर्दाश्त के बाहर हो गयी थी । उसने विभीषण को खूब खरी-खोटी सुनायी, और उसे जमकर फटकारा, "तुम मेरे भाई हो, इसीलिए अब तक जीवित हो, वरना जैसी बातें तुमने अपने मुंह मे निकाली हैं, तुम्हारा सर तुम्हारे धड़ से अलग पड़ा होता ।"

रावण की इतनी कठोर धमकियां सुनकर विभीषण को भी गुस्सा आ गया । वह बोला, "आप मेरे बड़े भाई हैं, पिता के समान हैं । आपकी भलाई चाहते हुए ही मैंने यह सब कहा था, वरना मुझे क्या गरज़ पड़ी थी । आपके मन में जो आये, सो कीजिए । आपकी मनपसंद बातें कहने वाले यहां कई लोग मौजूद हैं । मैंने यदि अन्यथा कहा है तो मुझे क्षमा करें । मैं जा रहा हूं । आप सुखी रहें, यही मेरी कामना है । अपनी रक्षा के जिम्मेदार अब आप स्वयं होंगे । आपको इन सभासदों, तमाम नागरिकों की रक्षा स्वयं करनी होगी ।"

यह कहकर विभीषण अपनी गदा उठाकर, अपने चार साथियों के साथ आकाश में उठा और जहां राम-लक्ष्मण थे, वहीं उनके निकट पहुंच गया ।

पांच राक्षसों को आकाश मार्ग से अपनी ओर बढ़ते देख वानर योद्धाओं को संदेह हुआ ।

विशेष रूप से सुग्रीव और भी सतर्क हो गया। उसे लगा कि वे पांचों राक्षस उनका भेद जानने या उनका वध करने के लिए ही उनकी ओर बढ़ रहे हैं। अपने मन की बात उसने हनुमान तथा अन्य साथियों को भी बतायी। उन वानर-योद्धाओं ने फौरन बड़े-बड़े पत्थर और पेड़ उठा लिये, और फिर उन्होंने सुग्रीव से उन्हें इस्तेमाल करने की अनुमति मांगी।

वानर-योद्धाओं का आक्रामक रवैया देख कर पांचों राक्षस विभीषण, अनल, शरभ संपाती तथा प्रधान-वहीं आकाश में स्थिर हो गये। अब विभीषण ने सुग्रीव तथा उसके साथियों को संबोधित करते हुए कहा, "मैं रावण का छोटा भाई विभीषण हूं। रावण बड़ा दुष्ट है। उसने कई अपराध किये हैं। उसने जटायू के प्राण लिये। उसने सीता का अपहरण किया, और फिर उसे लंका में ले आया। सीता विक्षिप्त अवस्था में है। वह लाचार है। वह राक्षसियों के कड़े पहरे में है। मैंने रावण को कई बार समझाया कि वह सीता को वापस राम तक पहुंचा दे, लेकिन उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो चुकी है। किसी की अच्छी बात उसके पल्ले नहीं पड़ती। वह अपना विवेक खो चुका है। मेरी बातों पर उसे गुस्सा आ जाता था। उसने मेरा भरसक अपमान किया। उसने मुझे एक साधारण सेवक से भी कम मान्यता दी। इसलिए मैं अपना सब कुछ-अपना घर-बार, अपने बीवी-बच्चे वहीं छोड़कर यहां राम की शरण में चला आया हूं। मैं अब राम का शरणागत हूं। राम मुझे स्वीकार करें।"
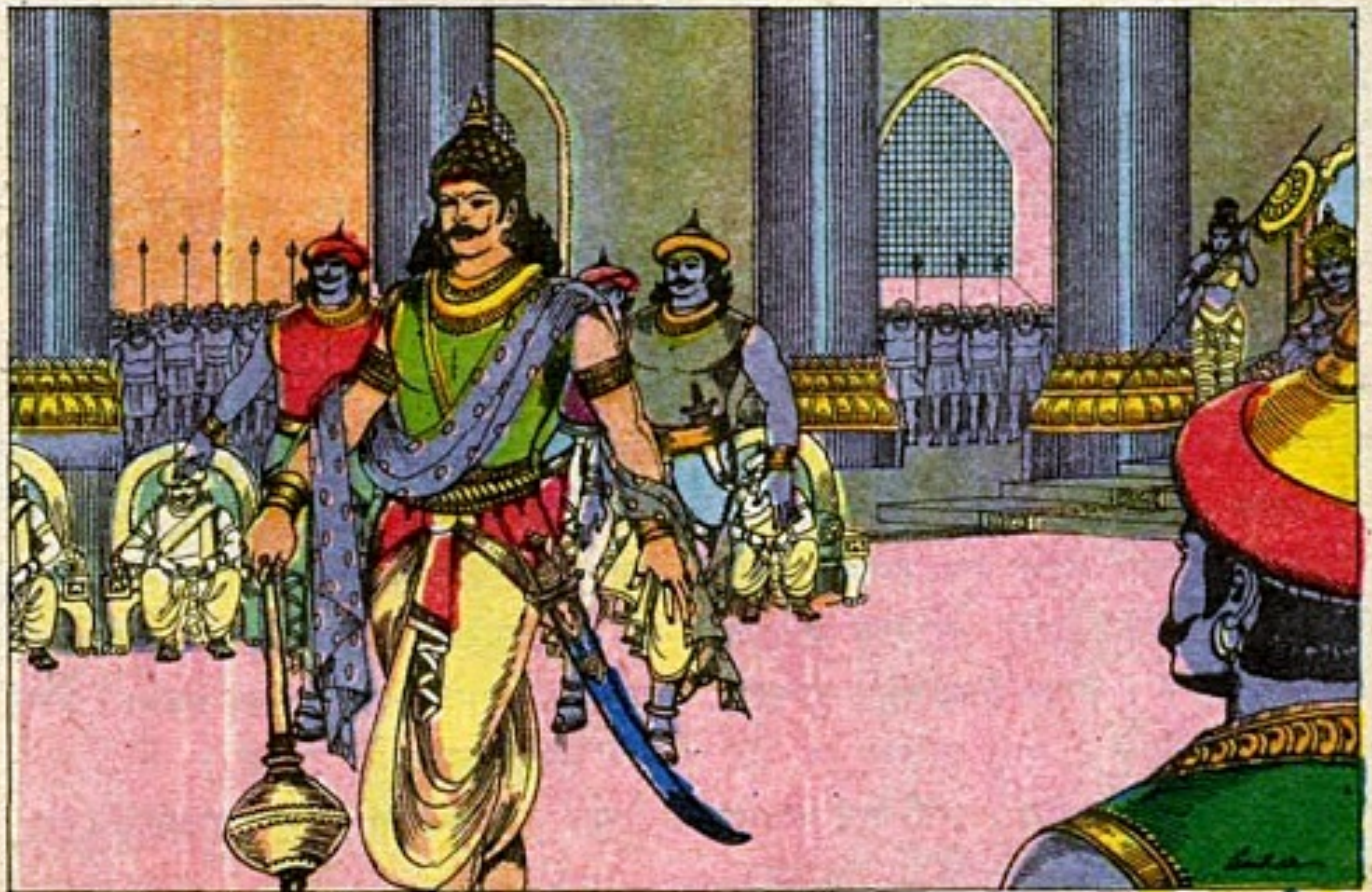
विभीषण की बातें सुनकर सुग्रीव राम से बोला, "मुझे तो विभीषण की बातों पर विश्वास नहीं होता। वह रावण का छोटा भाई है। साथ में उसके चार राक्षस और हैं। ये राक्षस बड़े मायावी होते हैं। जब चाहें अदृश्य हो सकते हैं। बहादुरी में और चालाकी में, दोनों तरह ये समर्थ होते हैं। इसलिए हमें सावधानी बरतनी होगी। हो सकता है रावण ने ही इन्हें भेजा हो। ये हर प्रकार का संकट हमारे लिए खड़ा कर सकते हैं। हमारे बीच फूट डलवा सकते हैं। अवसर पाकर हमारे एक-एक के प्राण भी ले सकते हैं। हमारे बीच रहेंगे तो कुछ भी कर सकते हैं। उन्हें हमारा हर भेद तो पता चल ही जायेग। हमें याद रखना होगा कि विभीषण रावण का छोटा भाई है। वह शत्रु-पक्ष से आया है। इसलिए हम किसी तरह से भी उस पर विश्वास नहीं कर सकते। बेहतर तो यही होगा कि हम इसके प्रति स्नेह जताकर, इन्हें अपने बीच बुलायें और फिर इन्हें इनके प्राणों से मुक्ति दिला दें।"

सुग्रीव ने जो कुछ कहा था, राम ने उसे ध्यान से सुना। फिर वह हनुमान की ओर मुड़े और बोले, "सुग्रीव ने जो कहा है, उसे सुन लिया है न? अब तुम्हें इस बारे में क्या कहना है? तुम भी बता दो।"

हनुमान से पहले अंगद बीच में बोल पड़ा, "सुग्रीव से मैं सहमत हूँ। शत्रु-पक्ष से आये व्यक्ति की बात पर हम यों ही विश्वास नहीं कर सकते। पहले हमें इस बात की जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए कि विभीषण कैसे स्वभाव का व्यक्ति है, उसका आचरण कैसा रहा है?"

"बेहतर हो उसके यहां आने से पहले हम उसके पास अपना एक भरोसे का व्यक्ति भेजें।" शरभ ने अपना मत दिया।

शरभ की बात सुनकर जांबवंत भी बोल पड़ा, "विभीषणा का इस तरह रावण की ओर से चले आना मेरी समझ में नहीं आ रहा। दाल में कुछ काला ज़रूर है।"

"ठीक है, हमारा पहले एक भरोसे का व्यक्ति उसके पास जायेगा और उससे रावण का हाल पूछेगा। उसके उत्तर देने से ही पता चल जायेगा कि उसका स्वभाव कैसा है।" यह सुझाव मैंद का था।

सब कह चुके तो आखिर हनुमान बोला,

"आप सबने जो कुछ कहा, उसे मैंने ध्यान से सुना। लेकिन मैं किसी से सहमत नहीं हूं। आप विभीषण की परीक्षा लेना चाहते हैं। कैसे लेंगे? जब तक वह हमारे बीच नहीं आयेगा, हमें उसके बारे में कैसे कुछ पता चलेगा? फिर जो व्यक्ति सामने खड़ा हो, उसके पास गुप्तचर या कोई अन्य व्यक्ति कैसे भेजेंगे? गुप्तचर तो वहीं भेजे जा सकते हैं, जहां व्यक्ति-विशेष के बारे में कुछ भी पता न हो, और वह कहीं दूर-दराज के इलाके में रहता हो। जांबवंत के तर्क में भी मुझे जान नहीं दिखती। कई बार परिस्थितियां ऐसी हो जाती हैं कि व्यक्ति लाचार हो जाता है। तब अनहोनी भी संभव होने लगती है। विभीषण की परिस्थितियां भी ऐसी ही रही होंगी। रावण और राम के बीच उसने तुलना की होगी। रावण की त्रुटियों से वह भली भांति परिचित है। उसने उसे समझाया भी होगा। पर रावण तो रावण है। उसने उसे खूब अपमानित किया होगा। तभी वह आपकी शरण में आया है। शरणागत को शरण मिलनी ही चाहिए। उसका यहां आना बिलकुल संदेहास्पद नहीं है। मैंद ने कहा कि हमें विभीषण के पास अपना दूत भेजकर रावण का हालचाल पूछना चाहिए ताकि हमें विभीषण के स्वभाव की कुछ झलक मिले। ऐसे क्या कभी कोई कुछ बताता है? वैसे तो विभीषण ने स्वयं ही बता दिया है कि वह क्यों रावण को छोड़कर यहां चला आया है। तब हमें और क्या जानना है? मुझे तो कहीं कोई खोट दिखाई नहीं देता। वह जिस प्रकार बोल रहा था। उससे स्पष्ट था कि वह बिलकुल निर्भय और निर्मल है। वालि का वध करके जिस प्रकार आपने वानर-राज्य की राज-सत्ता सुग्रीव को सौंप दी, उसी प्रकार रावण का वध करके आप लंका की सत्ता विभीषण को सौंप दें। इसी में लंका-वासियों की भलाई है और इसी में सत्य की विजय है। शायद विभीषण भी यही चाहता हो। मैंने आपको अपने मन की बात बता दी। इससे ज़्यादा मैं और कुछ नहीं कह सकता। निर्णय अब आपके हाथ में है।" (जारी)

शिल्पी की इच्छाएं

बहुत समय पहले चुवांग राज्य में एक महान् शिल्पी रहता था। उसके हाथ में गज़ब का कौशल था।

एक दिन एक धनी व्यक्ति ने उसे अपने यहां बुलवाया। शिल्पी उसके वैभव को देखकर दंग रह गया। कितना बड़ा भवन था! नौकर-चाकरों की भी कोई गिनती न थी। उसके मन में इच्छा हुई कि उसके पास भी ऐसा ही वैभव होना चाहिए।

इत्तफाक कि देवी उसके मन की इस इच्छा को तुरंत जान गयी। उसने उसे अपार संपत्ति का स्वामी बना दिया। शिल्पी अपने नये वैभव को पाकर आनंद-विभोर हो रहा था।

इस तरह कुछ समय बीत गया। एक दिन एक अहलकार उसके भवन के सामने से गुजरा। उसकी पालकी जहां-जहां से गुज़री, लोगों ने झुक-झुक कर अहलकार का सत्कार किया। शिल्पी ने उस अहलकार की अवहेलना की। अहलकार को गुस्सा आ गया। उसने अपने कर्मचारियों को कहकर उसकी अच्छी-खासी मरम्मत करवा दी।

अब उसे लगा, केवल धन-वैभव ही काफी नहीं, व्यक्ति के पास असली सत्ता होनी चाहिए। और उसके मन में यह इच्छा जगी। देवी ने वैसे ही वह इच्छा पूरी कर दी।

अब शिल्पी के सर पर हर वक्त सत्ता का भूत सवार रहता।

एक दिन वह अपने साथियों के साथ पहाड़ी इलाके में से गुज़र रहा था। वहां उसे कुछ बहुत ही सुंदर युवतियां दीख पड़ीं। वह उनसे छेड़-छाड़ करने लगा। तब वहां के लोग कुल्हाड़ियों-कुदालों के साथ आ पहुंचे और उन्होंने शिल्पी और उसके साथियों पर हल्ला बोल दिया। सब की अच्छी गत बनी।

धुत्, इन गिरिजनों के सामने तो मेरी सत्ता

चुवांग की लोककथा

कुछ काम नहीं आयी, शिल्पी ने सोचा-काश, मैं भी एक गिरिजन होता। और देवी ने उसे गिरिजन बना दिया।

एक दिन वह गिरिजन, यानी वह शिल्पी, एक खेत में काम कर रहा था। धूप बहुत तेज़ थी। उसका सर चकराने लगा। इतने में एक बादल ने सूरज को पूरी तरह ढ़क लिया था, जिससे उसकी तीखी धूप का असर बिलकुल जाता रहा था। शिल्पी बहुत खुश हुआ। उसके मन में एक और इच्छा जागृत हुई-काश कि मैं एक बादल होता। और देखते ही देखते वह शिल्पी बादल में परिवर्त्तित हो गया।

अब जैसे ही वह शिल्पी बादल में परिवर्तित हुआ, वैसे ही हवा का एक झोंका आया और बादल को उड़ा ले चला। शिल्पी ने अब हवा बनना चाहा और वह हवा बनकर बेरोक-टोक आकाश में उड़ने लगा। इतने में वह एक पहाड़ से जा टकराया। पहाड़ से टकराकर वह छिन्न-भिन्न हो गया, पर पहाड़ ज्यों का त्यों खड़ा रहा।

अब उसे पहाड़ से ईर्ष्या होने लगी। पहाड़ तो पहाड़ ही है, उसने सोचा। हवा उसके मुकाबले में क्या है। और देखते ही देखते वह एक पहाड़ी शिला में परिवर्तित हो गया।

एक दिन कुछ शिल्पी उस इलाके में आये। उनकी नजर उस शिला पर पड़ी। उन्हें वह शिला बहुत अच्छी लगी। उन्होंने सोचा, क्यों न इसे हम अपने साथ ले चलें। इससे बहुत अच्छी मूर्तियां गढ़ी जा सकेंगी।

शिल्पियों की बात सुनकर वह शिला-रूपी शिल्पी एकदम घबरा गया। उससे और कुछ तो करते न बना, वह ज़ोर से चिल्लाया– "है देवी, मुझे बचाओ।"

देवी को तुरंत प्रकट होना पड़ा। उसने उसे सांत्वना देते हुए कहा, "घबराओ नहीं, मैं तुम्हें फिर शिल्पी बनाये देती हूं। तुम शिल्पी ही ठीक थे।" और इन शब्दों के साथ उसने उसे फिर शिल्पी बना दिया।

शिल्पी अब अपने से संतुष्ट था। उसने प्रण किया कि वह भविष्य में अपने मन में फिजूल की इच्छाओं को उभरने नहीं देगा।

शिक्षा क्यों?

कुंतल देश पर राजा कुशलसेन का राज था। दुर्भाग्यवश कुशलसेन कोई शिक्षा प्राप्त नहीं कर सका था।

एक बार उसके मन में यों ही प्रश्न उठा—शिक्षा किस लिए? यह क्यों ज़रूरी है?

उसने अपने मन की यह शंका अपने दरबारियों के सामने रखी। सबने अपने-अपने ढंग से उत्तर दिया।

"शिक्षित व्यक्ति बढ़िया नौकरी पा सकता है," एक ने उत्तर दिया।

"शिक्षा से कीर्ति प्राप्त होती है," दूसरे ने कहा।

"शिक्षा व्यक्ति को गौरव प्रदान करती है," एक कवि बोला।

"विद्या-प्राप्त व्यक्ति की हर कहीं पूछ होगी। और तो और, विद्या-रूपी धन को कोई चोर चुरा नहीं सकता। यह धन सब से श्रेष्ठ है," एक विद्वान का कहना था।

राजा को ढेर सारे उत्तर मिले थे, लेकिन किसी भी उत्तर से वह संतुष्ट हुआ नहीं दिखता था।

दरबारी विदूषक बड़ा होशियार था। वह भांप गया कि राजा को सही उत्तर नहीं मिला है और वह उसी के इंतज़ार में है। इसलिए वह अपने ढंग से बोला, "एक उत्तर मैं भी देना चाहता हूं, राजन्। पर उससे नाराज़ तो नहीं होंगे?"

"नाराज़ क्यों?" राजा ने उसे अभयदान देते हुए कहा, "तुम बेखटके अपनी बात कहो।"

राजा से आश्वस्ति पाकर विदूषक ने जो उत्तर दिया, वह इस प्रकार था, "शिक्षा इसलिए ज़रूरी है कि व्यक्ति के मन में इस तरह की शंकाएं न उठें, और न ही उन्हें लेकर वह दूसरों को इस तरह परेशान करे।"

विदूषक का उत्तर सुनकर सभी दरबारी ठठाकर हंस दिये, पर राजा कुशलसेन पल भर के लिए हक्का-बक्का रह गया। फिर वह जल्दी ही संभल गया, क्योंकि बात उसके पल्ले पड़ गयी थी अब वह भी दूसरे दरबरियों के साथ हंस रहा था।

—जगदीश चौधरी
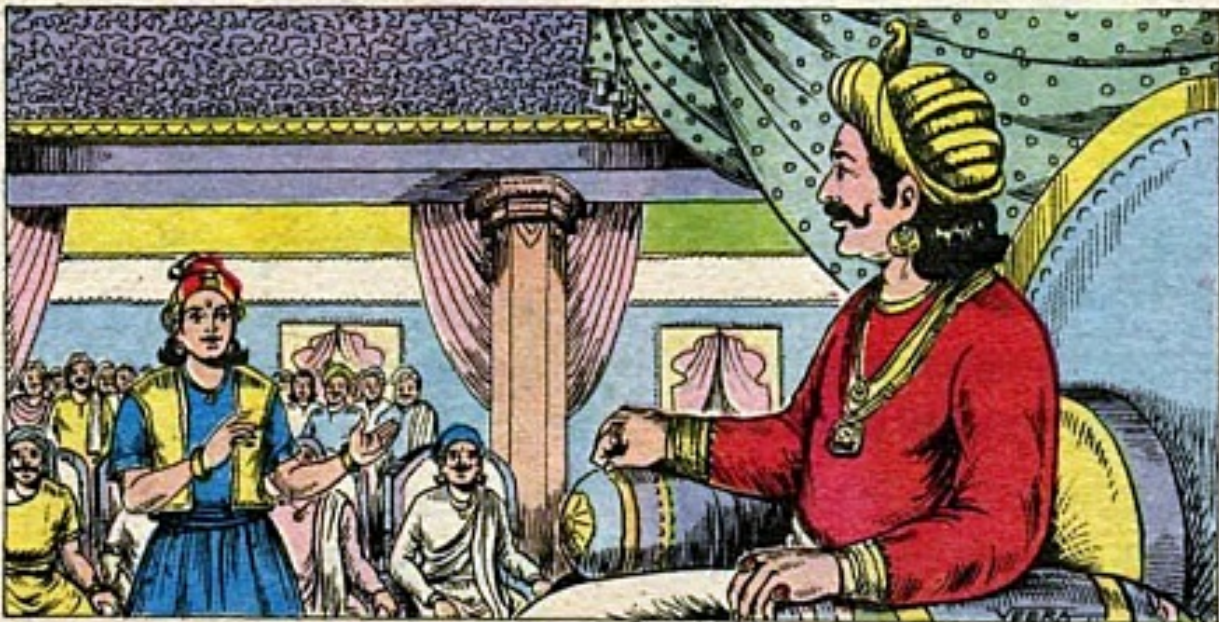
बल-परीक्षा

अलकापुरी राज्य में एक सेनानायक था कंठीरव। कंठीरव एक महान सेनानायक था। विजयदशमी की रात को वह अलकापुरी के राजा विक्रमदेव, उसके परिवार के सदस्यों तथा अन्य सेनानायकों के साथ बातें कर रहा था।

इतने में वहां घोड़े पर सवार एक व्यक्ति आया। वह कुछ विचित्र दिख रहा था। वह घोड़े से नीचे उतरा और उनकी ओर बढ़ा।

उसे अपनी ओर बढ़ते देख सेनानायकों में से एक ने पूछा, "कौन हो तुम?"

उस व्यक्ति का उत्तर संक्षिप्त था, "मैं एक योद्धा हूं!"

"ठीक है। लेकिन तुम चाहते क्या हो?" अब राजा विक्रमदेव ने स्वयं प्रश्न किया।

"एक योद्धा क्या चाहेगा? मैं केवल अपने बल की परीक्षा चाहता हूं।" उसने प्रश्न-उत्तर दोनों एकसाथ दाग दिये।

सब उसे ग़ौर से देख रहे थे। वह कद्दावर था, तगड़ी काठी का था। उसके दाढ़ी भी थी, जो काले रंग की थी और चांदनी में खूब चमक रही थी। उसके हाथ में एक कुल्हाड़ी थी। वह कुल्हाड़ी भी खूब चमक रही थी।

"ठीक है, युद्ध चाहते हो न? हमारा सेनानायक कंठीरव तुम से युद्ध करेगा।" राजा विक्रमदेव ने कहा।

राजा का संकेत पाते ही कंठीरव उठकर खड़ा हो गया।

कंठीरव को खड़ा हुआ देख वह दाढ़ीवाला योद्धा बोला, "मैं युद्ध करने नहीं आया। मैं बल-परीक्षा चाहता हूं। मेरी यह कुल्हाड़ी देख रहे हो न! बस, मैं चाहता हूं कि मेरी इस कुल्हाड़ी से मेरे गले पर भरपूर वार करो। केवल एक वार करना होगा। इसी

२५ वर्ष पूर्व चंदामामा में प्रकाशित कहानी

तरह अगले वर्ष मैं तुम्हारे गले पर वार करूंगा । ठीक आज के दिन ।"

बड़ी विचित्र इच्छा थी यह! उसे सुनकर सब ठठाकर हंस दिये । क्या कोई इस धारदार कुल्हाड़ी के वार से ज़िंदा बचा रह सकता है? ज़िंदा बचेगा तभी तो अगले वर्ष वार करेगा न?

सब उत्कंठित थे । उधर योद्धा वार खाने के लिए तैयार खड़ा था । कंठीरव आगे बढ़ा । उसने उस योद्धा के हाथ से कुल्हाड़ी ले ली और अपनी पूरी ताकत के साथ योद्धा के गले पर वार किया ।

पर यह क्या! कुल्हाड़ी का वार योद्धा की गर्दन को अलग न कर सका । कुल्हाड़ी बीच में ही अटकी रह गयी । ज़्यादा ताज्जुब की बात तो यह थी कि गर्दन में से खून बिलकुल नहीं निकल रहा था और योद्धा भी अविचलित खड़ा था । फिर उसने वह कुल्हाड़ी अपनी गर्दन से परे की और गर्दन पर हाथ फेरा । उसे रत्ती भर भी चोट नहीं आयी थी ।

योद्धा ने अब कंठीरव की ओर देखा । बोला, "अपने वचन को याद रखना । भूलना नहीं । अगले वर्ष इसी दिन मैं तुम्हारा गिरिदुर्ग में इंतज़ार करूंगा । मैं वहीं रहता हूं ।" और यह कहकर वह अपने घोड़े को सरपट दौड़ाता हुआ वहां से ग़ायब हो गया ।

इस घटना से सभी भौंचक रह गये ।

एक वर्ष यों ही बीत गया । राजा को वह वचन याद था । पर वह चुप रहा । कंठीरव को यह वचन स्वयं पूरा करना चाहिए । दिया वचन नहीं निभाया गया तो अलकापुरी के नाम पर बट्टा लगेगा । आखिर राजा को कंठीरव से उस योद्धा के पास जाने के लिए कहना ही पड़ा ।

जाने के लिए कहा तो सही उसने, पर उसे यह भी पता था कि कंठीरव सही-सलामत लौटकर नहीं आयेगा । कंठीरव जैसे योद्धा को यों ही खो देना कोई मामूली बात नहीं थी ।

खैर, कंठीरव खुशी-खुशी गिरिदुर्ग के लिए रवाना हो गया । काफी लंबा सफर था । जंगलों में से होकर जाना था । कंठीरव घोड़े पर सवार दिन-रात चलता रहा । जब बहुत थक गया तो घोड़े पर से उतर बैठा और एक पेड़ के नीचे आराम करने लगा ।

इतने में उसे कहीं से चीखपुकार सुन पड़ी। वह फौरन उसी दिशा में चल पड़ा। कुछ ही दूर गया था कि उसने देखा, एक युवती लुटेरों के बीच घिरी हुई है। उसने अपनी तलवार म्यान में से निकाली और उन लुटेरों से भिड़ गया। उन लुटेरों ने जब देखा कि मुकाबला कड़ा है तो वे वहां से भाग खड़े हुए।

कंठीरव ने देखा कि वह युवती बंधनों में जकड़ी हुई है। उसने उसके वे तमाम बंधन खोले और उससे उसके बारे में पूछ-ताछ की। पता चला कि वह एक राजकुमारी है। राजकुमारी को कंठीरव ने क्योंकि लुटेरों से बचाया था, इसलिए इनाम में उसने उसकी ओर एक अंगूठी बढ़ायी और बोली, "यह एक जादुई अंगूठी है। आप इसे मेरी ओर से स्वीकार करें। इसे पहनने से आप पर कोई अस्त्र असर नहीं करेगा।"

"नहीं, यह उपहार मैं स्वीकार नहीं कर सकता," कंठीरव ने कहा। "मैं एक अन्य योद्धा के प्रति वचनबद्ध हूं। उसे मेरी गर्दन पर एक धारदार कुल्हाड़ी से वार करना है, क्योंकि हमारी शर्त के मुताबिक पहले मैंने उसकी गर्दन पर वार किया था, विजयदशमी वाले दिन, अब से एक वर्ष पहले। मैं यह अंगूठी पहन लूंगा तो मैं उसे एक प्रकार से धोखा दूंगा। दूसरे, यह वीरोचित नहीं होगा। तीसरे, मैं अपने धर्म की अवहेलना करूंगा। मेरी नजरों में किसी को धोखा देना अधर्म है। मैं यह अधर्म नहीं कर सकता।" और यह कहकर कंठीरव वापस उसी पेड़ की ओर बढ़ गया।

थोड़ी देर के बाद कंठीरव स्नान करने नदी में उतरा। उसे नदी में उतरता देख राजकुमारी उस पेड़ के निकट पहुंची। कंठीरव जब नदी में नहाकर लौटा तो राजकुमारी तब तक वहां से जा चुकी थी।

कंठीरव, आखिर गिरिदुर्ग पहुंच ही गया। वहां वह योद्धा कुल्हाड़ी के साथ पहले ही तैयार खड़ा था। कंठीरव को देखकर वह बहुत खुश हुआ और अपना वचन निभाने के लिए उसने उसकी भरपूर प्रशंसा की।

कंठीरव ने उसकी ओर अपनी गर्दन बढ़ाते हुए कहा, "अब देर किस बात की। करो वार अपना। हां, पर एक ही वार करना।"

कंठीरव की चेतावनी सुनकर वह योद्धा ज़ोर-ज़ोर से हंसा । "एक ही वार करूंगा, मेरे दोस्त ।" वह बोला, "लेकिन यह वार क्या तुम सह सकोगे? यह तो तुम्हारा अंत होगा ।" और इन शब्दों के साथ उस योद्धा ने अपनी कुल्हाड़ी उठायी और कंठीरव की गर्दन पर चला दी ।

पर यह क्या? कुल्हाड़ी का फल कंठीरव की गर्दन के पार नहीं जा सका । वह बीच में ही रह गया । गर्दन से खून भी नहीं निकल रहा था । कंठीरव वैसे का वैसा खड़ा था । जैसे उस पर कुल्हाड़ी के वार का कोई असर हुआ ही न हो । वह योद्धा तो चौंका ही, कंठीरव स्वयं भी हैरान रह गया । उसे विश्वास नहीं हो रहा था । फिर उसने अपनी गर्दन पर से कुल्हाड़ी हटायी और कुल्हाड़ी वाली जगह पर हाथ फेरा । बिलकुल कुछ नहीं हुआ था । मामूली-सी खरोंच भी नहीं आयी थी ।

योद्धा गुस्से से चिल्लाया, "यह धोखा है! सरासर धोखा है!" और वह अपनी कुल्हाड़ी से फिर वार करने को हुआ ।

कंठीरव को भी अब गुस्सा आ गया था । उसने अपनी तलवार निकाल ली ।

दोनों योद्धाओं को आमने-सामने हुआ देख गिरिदुर्ग का राजा और राजकुमारी वहां आ गये । उन्होंने उन्हें लड़ने से रोका । फिर राजकुमारी ने राजा को बताया कि कैसे कंठीरव ने उसकी लुटेरों से रक्षा की थी और कैसे, जब वह नदी पर स्नान करने गया था, तो वह उसकी ग़ैरहाज़िरी का फायदा उठाकर वहां उसकी ज़िरह में अपनी जादुई अंगूठी छोड़ आयी थी ।

सच्चाई जानकर योद्धा ने कंठीरव की खूब प्रशंसा की और उसे गले लगाते हुए बोला, "हम दोनों ने अपना-अपना धर्म निभाया है! मेरा साधुवाद स्वीकार करो!"

कंठीरव की धर्म के प्रति निष्ठा और उसके साहस को देखकर राजा भी बहुत खुश हुआ, और उसने उसी खुशी में अपनी बेटी का विवाह कंठीरव से कर दिया । साथ में उसे उस राज्य का उत्तराधिकार भी सौंप दिया ।

जीतू-मीतू

किसी समय हमारे देश में अनेक राजा थे । उन्हीं में से किसी एक राजा के यहां जीतू को नौकरी मिल गयी । राजा के यहां उन दिनों नौकरी मिल पाना बहुत बड़ी बात थी ।

उधर जीतू का एक बचपन का दोस्त था मीतू । मीतू निहायत मेहनती था । वह गलियों में तरकारियां बेचता तथा और भी जो काम हाथ लगता उसे करता, और इस तरह अच्छा कमा लेता ।

पर जो मान जीतू का था, वह मीतू का नहीं था । इससे जीतू का घमंड बहुत बढ़ता जा रहा था । और तो और, वह अब अपने बचपन के दोस्त मीतू से भी बात करने से कतराता था ।

यह सब देखकर मीतू बड़ा दुःखी हुआ । उससे मीतू से रहा नहीं गया । एक दिन वह राजदरबार में ही जा पहुंचा । वह यह देखना चाहता था कि राजदरबार में जीतू की कितनी इज्ज़त है ।

जिस समय वह वहां पहुंचा, जीतू को किसी से बड़ी तगड़ी डांट मिल रही थी । मीतू हैरान रह गया । उसने पास ही खड़े एक कर्मचारी से पूछा, "महोदय, हमारे जीतू को इस तरह फटकारने वाला यह व्यक्ति कौन है?"

कर्मचारी ने मीतू की ओर सरसरी तौर से देखते हुए कहा, "वह एक बड़ा अधिकारी है ।"

"मान लिया वह एक बड़ा अधिकारी है । पर इस तरह अगर वह डांट लगायेगा, तो क्या उसे सह लिया जायेगा?" मीतू को बड़ा अचंभा हो रहा था ।

"सहना होगा । नहीं तो नौकरी खत्म हुई समझो । और एक बार अगर यहां से नौकरी खत्म हो गयी तो बाहर कोई दो कौड़ी

नीलिमा सिंह

से भी नहीं पूछेगा ।"

"क्या वह हर किसी को यों ही डांट लगाता है?" मीतू ने प्रश्न किया ।

"हर कोई इस हद तक बर्दाश्त नहीं करेगा । पर जीतू की तो बात ही दूसरी है । उसके बर्दाश्त की तो जैसे कोई सीमा ही नहीं । तुम देखते जाओ । खुद समझ जाओगे ।" उस कर्मचारी ने कहा ।

बड़े अधिकारी ने जीतू को इसलिए डांटा था कि जिस कक्ष में वे खड़े थे, वह ठीक से साफ नहीं था । जीतू ने कहा कि सफाई करने वाला आया नहीं । लेकिन इसके साथ ही उसने सफाई करने वाला झाड़न अपने हाथ में ले लिया और उस कक्ष की सफाई खुद करने लगा ।

थोड़ी देर बाद वह अधिकारी जीतू को फिर डांटने लगा । उसका कहना था कि सफाई उस तरह नहीं हो पायी जैसी होनी चाहिए थी । इसलिए वह जाये और सफाई करने वाले को ढूंढ़कर लाये । जीतू ने सफाई करने वाले के बारे में इधर-उधर पूछताछ की और वापस आकर बोला कि वह कर्मचारी अब तक भी नहीं आया है । इस पर उसे फिर आदेश मिला कि वह तुरंत जाये और उसे उसके घर से बुलाकर लाये । जीतू पता लगाते-लगाते सफाई कर्मचारी के घर पहुंचा और फिर उसे लिवाकर अपने साथ ले आया । उसका घर ढूंढ़ने में उसे कुछ समय तो लगना ही था । इसलिए अधिकारी अब उसे फिर डांट रहा था ।
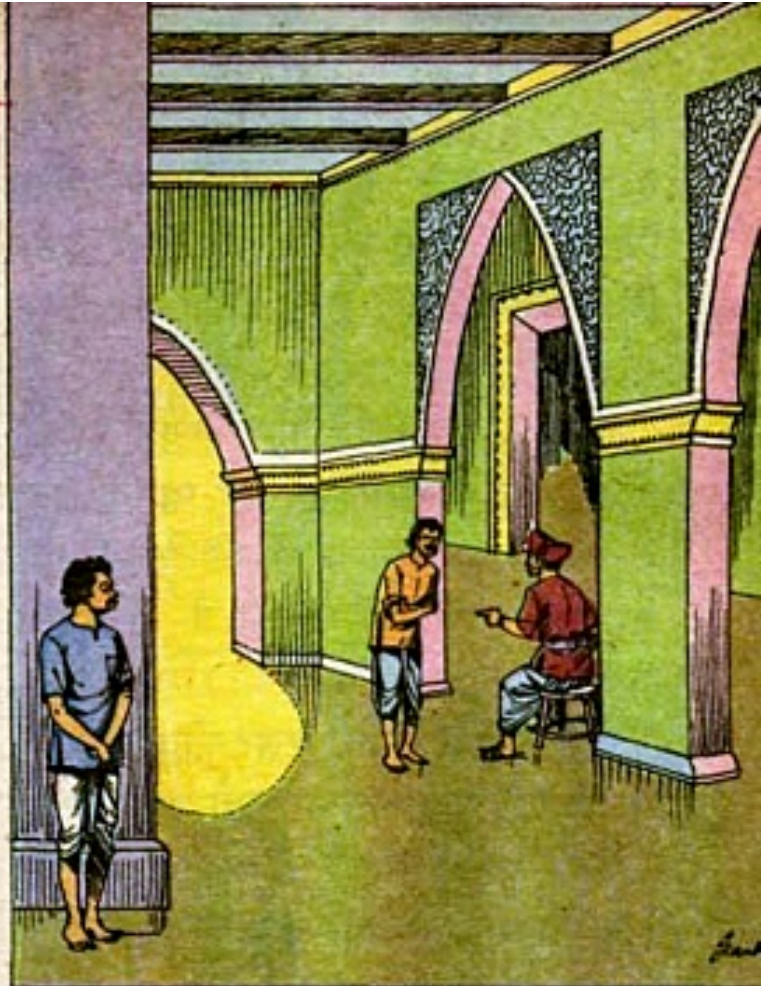
मीतू यह सब तमाशा बड़े ग़ौर से देख रहा था । उसे लगा कि जीतू की ज़िंदगी किसी गुलाम की ज़िंदगी से बेहतर नहीं है । उसने मन ही मन हिसाब लगाया—माना मुझे बाहर उतना मान नहीं मिलता, पर यह भी तो सच है कि किसी प्रकार की गलती हो जाने पर कोई मुझे डांटता भी नहीं ।

उधर जीतू ने देख लिया था कि मीतू उस समय वहीं पास में ही खड़ा था जब उसे डांट-फटकार मिल रही थी, जीतू अपने को बड़ा अपमानित महसूस कर रहा था । उसे डर था कि इसी बात को लेकर मीतू कहीं उसके खिलाफ प्रचार शुरू न कर दे । इसलिए शाम को जैसे ही वह राजा के यहां से लौटा, उसने अपने बीवी-बच्चों को साथ

लिया और मीतू के यहां जा पहुंचा । उसका इरादा, दरअसल, अपनी झेंप को किसी तरह मिटाना था, और यह भी कि इधर-उधर की हांककर अपनी धाक किसी तरह फिर से जमाना था ।

पर जिस समय जीतू मीतू के यहां पहुंचा, मीतू अपनी पत्नी से कह रहा था कि राजा के यहां काम करने वालों की ज़िंदगी एक तरह से गुलामों की ज़िंदगी से भी बदतर होती है ।

खैर, जैसे ही उसकी नज़र जीतू पर पड़ी, वह बोला, "बड़े वक्त पर आये, जीतू! हमारे यहां दो दिन से हमारा नौकर नहीं आ रहा है । पिछवाड़े में बड़ा कूड़ा जमा हो गया है । यह लो झाड़ू और जुट जाओ सफाई करने में । जितनी मज़दूरी चाहोगे, दूंगा!"

मीतू की बात सुनकर जीतू आग बबूला हो गया । पर वह अपना गुस्सा किसी तरह पी गया और बोला, "घर आये मेहमान का इस तरह अपमान करोगे? और वह भी जब वह तुम्हारे बचपन का दोस्त हो?"

जीतू की पत्नी से भी न रहा गया । वह भी दु:खी स्वर में बोली, "हंसी-मज़ाक की भी कोई हद होती है ।"

"तुमने मेरी बात का अर्थ ठीक से नहीं पकड़ा, बहन," मीतू को मज़बूर होकर कहना पड़ा, "राजा के यहां काम करने वाले गुस्सा करना तो जानते ही नहीं । उन्हें कितना भी डांट-फटकार लो, उनकी कितनी भी बेइज़्ज़ती कर लो, वे सब सह लेते हैं । यह मैं उदाहरण के साथ अपने बच्चों को बता रहा था । राजा के यहां जीतू की बर्दाश्त की हद देखकर मैं दंग रह गया । पर अभी जिस तरह से जीतू की प्रतिक्रिया हुई है, उससे पता चलता है कि मेरे दोस्त जीतू में आत्म-सम्मान जैसी कोई चीज़ थोड़ी-बहुत बची हुई है, चाहे वह राजदरबार से बाहर ही देखने को मिले । ग़नीमत है मेरा बचपन का दोस्त जीतू सही-सलामत है!"

मीतू का तर्क सुनकर जीतू और मीतू, दोनों की पत्नियां ठठाकर हंस दीं । मज़बूरी में जीतू को भी हंसना पड़ रहा था ।

प्रकृति: रूप अनेक

कंगारुओं का देश

आस्ट्रेलिया को कंगारुओं का देश कहा जाता है। कंगारू एक शाकाहारी प्राणी है। इसके आगे की टांगें नाटी होती हैं और पीछे की काफी लंबी, जिससे यह लंबी-लंबी छलांगें भर सकता है। कुछ कंगारू बृहदाकार होते हैं। उनके सर भेड़ के सर के समान होते हैं, और उनकी ऊंचाई ९ फुट (२.७४ मीटर) के करीब होती है। कुछ छोटे आकार के भी होते हैं। सब से छोटा कंगारू एक खरगोश के समान दिखता है।

मगरमच्छ के आंसू

कोई व्यक्ति झूठ-मूठ के आंसू बहाये तो तुम उसे क्या कहोगे? यही न कि यह मगरमच्छी आंसू बहा रहा है? सच तो यह है कि मगरमच्छ के ये आंसू आंसू होते ही नहीं, क्योंकि मगरमच्छ अगर किसी को निगल भी जाये तो इसमें किसी प्रकार की कोई सहानुभूति नहीं उमड़ती, ऐसे ही जैसे नरभक्षी व्यक्ति में किसी अन्य व्यक्ति को खाने पर नहीं उमड़ती। दरअसल, मगर-मच्छ की आंखों से बहने वाला पानी उसके शरीर से अतिरिक्त नमक खारिज करने का एक तरीका है, जिसका संचालन उसकी कुछ ग्रंथियां करती हैं।

सांप के कान

अक्सर हम सपेरों को बीन बजाकर नाग को नचाते देखते हैं। नाग अपना फन काढ़े सपेरे की बीन को देखता हुआ इधर-उधर हिलता रहता है जिसे हम नाग का नाचना कहते हैं। पर दरअसल, नाग को बीन का संगीत सुनाई देता ही नहीं, क्योंकि उसके पास कान जैसा कोई यंत्र नहीं है। वह तो अपने शरीर द्वारा कुछ तरंगें ही पकड़ पाता है, जिनके कारण वह सतर्क हो जाता है। दूसरे शब्दों में सांप के कान उसका शरीर ही है।
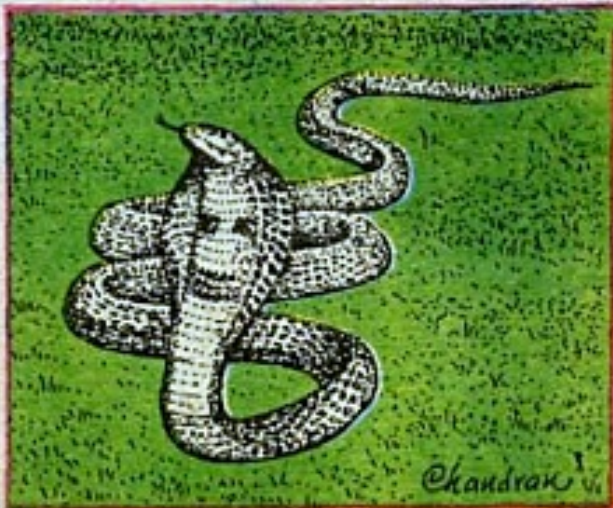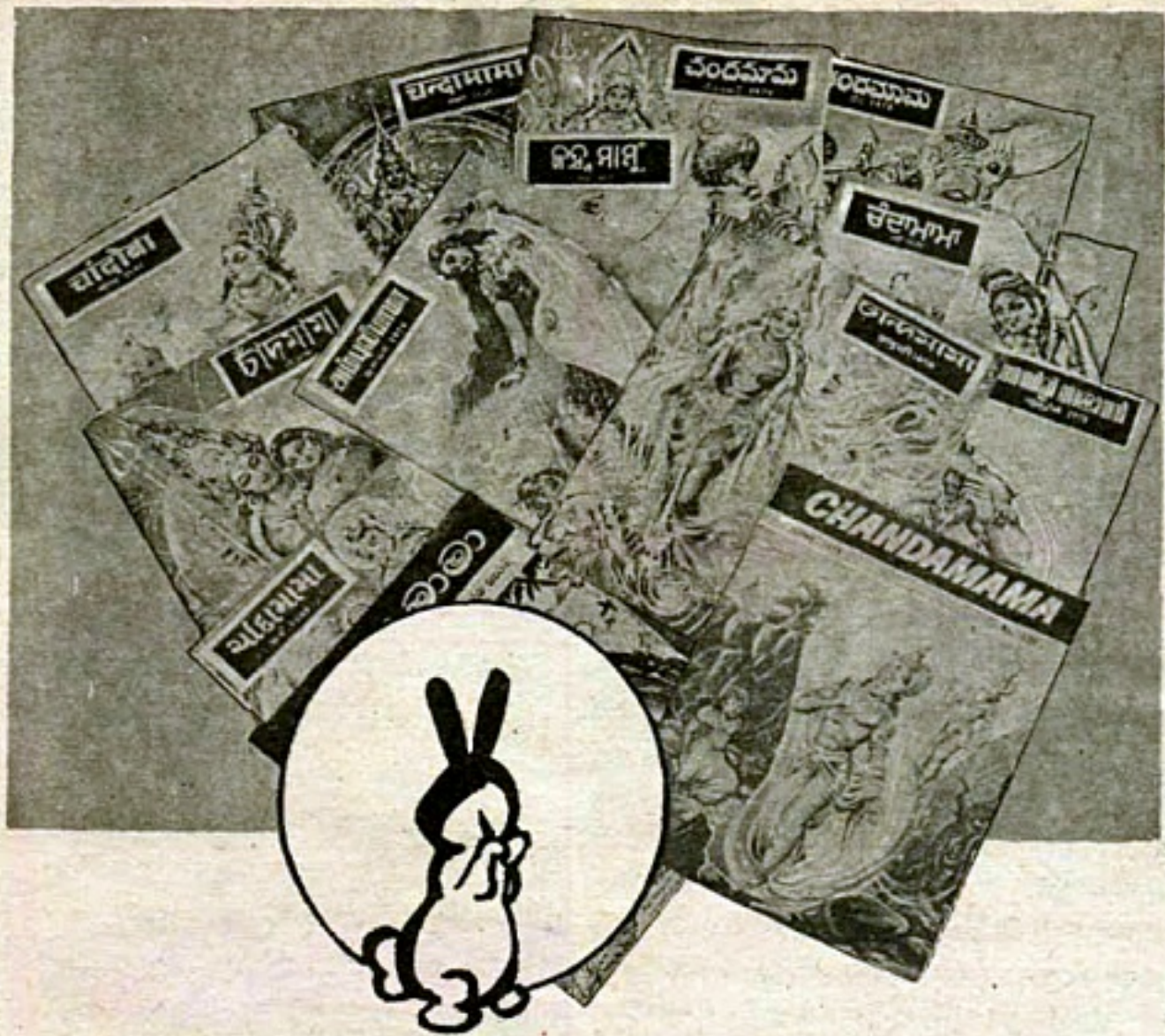
CHANDAMAMA

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मार्च १९९२ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

M. Natarajan

Devidas Kasbekar

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० जनवरी '९२ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६

नवम्बर १९९१ की प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम फोटो: नाप-तोल की छोड़ो बातें!

द्वितीय फोटो: करनी है आकाश से बातें!!

प्रेषिका: वीना टहिल्यानी, आर. आर. फ्लैट्स, माईलापुर, मद्रास-६०० ००४

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

अपने प्यारे चहेते के लिए जो हो दूर सुदूर
है न यहाँ अनोखा उपहार जो होगा प्यार भरपूर

चन्दामामा

प्यारी-प्यारी सी चंदामामा दीजिए उसे उसकी अपनी पसंद की भाषा में—
आसामी, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल या तेलुगु
—और घर से अलग कहीं दूर रहे उसे लूटने दीजिए घर की मौज-मस्ती

चन्दे की दरें (वार्षिक)

आस्ट्रेलिया, जापान, मलेशिया और श्रीलंका के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. 93.00 वायु सेवा से रु. 168.00

फ़्रान्स, सिंगापुर, यू.के., यू.एस.ए.,
पश्चिम जर्मनी और दूसरे देशों के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. 99.00 वायु सेवा से रु. 168.00

अपने चन्दे की रकम डिमांड ड्राफ्ट या मनी ऑर्डर द्वारा
'चन्दामामा पब्लिकेशन्स' के नाम से निम्न पते पर भेजिए:

सर्क्युलेशन मैनेजर, चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.